ऋषि प्रसाद

वर्ष : ९
अंक : ७८
९ जून १९९९

सम्पादक : क. रा. पटेल,
प्रे. खो. मकवाणा

मूल्य : रू. ६-००

सदस्यता शुल्क

भारत में

(१) वार्षिक : रू. ५०/-
(२) पंचवार्षिक : रू. २००/-
(३) आजीवन : रू. ५००/-

नेपाल व भूटान में

(१) वार्षिक : रू. ७५/-
(२) पंचवार्षिक : रू. ३००/-
(३) आजीवन : रू. ७५०/-
(डाक खर्च में वृद्धि के कारण)

विदेशों में

(१) वार्षिक : US $ 30
(२) पंचवार्षिक : US $ 120
(३) आजीवन : US $ 300

कार्यालय
'ऋषि प्रसाद'
श्री योग वेदान्त सेवा समिति
संत श्री आसारामजी आश्रम
साबरमती, अमदावाद-३८०००५.
फोन : (०७९) ७५०५०१०, ७५०५०११.

प्रकाशक और मुद्रक : क. रा. पटेल
श्री योग वेदान्त सेवा समिति,
संत श्री आसारामजी आश्रम, मोटेरा, साबरमती, अमदावाद-३८०००५ ने पारिजात प्रिन्टरी, राणीप, अमदावाद एवं पूर्वी प्रिन्टर्स, राजकोट में छपाकर प्रकाशित किया।

Subject to Ahmedabad Jurisdiction.

अनुक्रम

पूज्यश्री के दर्शन-सत्संग
SONY चैनल पर 'ऋषि प्रसाद' रोज सुबह ७.३० से ८

'ऋषि प्रसाद' के सदस्यों से निवेदन है कि कार्यालय के साथ पत्रव्यवहार करते समय अपना रसीद क्रमांक एवं स्थायी सदस्य क्रमांक अवश्य बतायें।

मन को कैसे जीतें ?

– पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

जितने बड़े व्यक्ति को हराया जाता है, उतना ही जीत का महत्त्व बढ़ जाता है। मन एक शक्तिशाली शत्रु है। उसे जीतने के लिए बुद्धिपूर्वक यत्न करना पड़ता है। मन जितना शक्तिशाली है, उस पर विजय पाना भी उतना ही महत्त्वपूर्ण है। मन को हराने की कला जिस मानव में आ जाती है, वह मानव महान् हो जाता है।

'श्रीमद्भगवद्गीता' में अर्जुन भगवान श्रीकृष्ण से पूछता है :

चंचलं हि मनः कृष्ण प्रमाथि बलवद्दृढम् ।
तस्याहं निग्रहं मन्ये वायोरिव सुदुष्करम् ॥

'हे श्रीकृष्ण ! यह मन बड़ा चंचल, प्रमथन स्वभाववाला, बड़ा दृढ़ और बलवान् है। इसलिए उसको वश में करना मैं वायु को रोकने की भाँति अत्यंत दुष्कर मानता हूँ।'

(गीता : ६.३४)

भगवान श्रीकृष्ण कहते हैं :

असंशयं महाबाहो मनो दुर्निग्रहं चलम् ।
अभ्यासेन तु कौन्तेय वैराग्येण च गृह्यते ॥

'हे महाबाहो ! निःसंदेह मन चंचल और कठिनता से वश में होनेवाला है। परंतु हे कुन्तीपुत्र अर्जुन ! यह अभ्यास अर्थात् एकीभाव में नित्य स्थिति के लिए बारंबार यत्न करने से और वैराग्य से वश में होता है।' (गीता : ६.३५)

जो लोग केवल वैराग्य का ही सहारा लेते हैं, वे मानसिक उन्माद के शिकार हो जाते हैं। मान लो, संसार में किसी निकटवर्ती के माता-पिता या कुटुम्बी की मृत्यु हो गयी। गये श्मशान में तो आ गया वैराग्य... किसी घटना को देखकर हो गया वैराग्य... चले गये गंगा किनारे... वस्त्र, बिस्तर आदि कुछ भी पास में न रखा... भिक्षा माँगकर खा ली... फिर अभ्यास नहीं किया। ...तो ऐसे लोगों का वैराग्य एकदेशीय हो जाता है।

अभ्यास के बिना वैराग्य परिपक्व नहीं होता है। अभ्यासरहित जो वैराग्य है वह 'मैं त्यागी हूँ...' ऐसा भाव उत्पन्न कर दूसरों को तुच्छ दिखानेवाला एवं अहंकार सजानेवाला हो सकता है। ऐसा वैराग्य अंदर का आनंद न देने के कारण बोझरूप हो सकता है। इसीलिए भगवान कहते हैं :

अभ्यासेन तु कौन्तेय वैराग्येण च गृह्यते ।

अभ्यास की बलिहारी है क्योंकि मनुष्य जिस विषय का अभ्यास करता है, उसमें वह पारंगत हो जाता है। जैसे- साइकिल, मोटर आदि चलाने का अभ्यास है, पैसे 'सेट' करने का अभ्यास है वैसे ही आत्म-अनात्म का विचार करके, मन की चंचल दशा को नियंत्रित करने का अभ्यास हो जाए तो मनुष्य सर्वोपरि सिद्धिरूप आत्मज्ञान को पा लेता है।

मन का साक्षी होने का अभ्यास अगर हो जाए तो मन को जीतने की शक्ति आ जाती है और जिसने मन को जीत लिया फिर उसे कुछ भी जीतना शेष नहीं रह जाता।

साधक अलग-अलग मार्ग के होते हैं। कोई ज्ञानमार्गी होता है, कोई भक्तिमार्गी होता है, कोई कर्ममार्गी होता है तो कोई योगमार्गी होता है। सेवा में अगर निष्कामता हो अर्थात् वाहवाही की आकांक्षा न

हो एवं सच्चे दिल से, परिश्रम से अपनी योग्यता ईश्वर के कार्य में लगा दे तो यह हो गया निष्काम कर्मयोग।

निष्काम कर्मयोग में कहीं सकामता न आ जाये- इसके लिए सावधान रहे और कार्य करते-करते भी बार-बार अभ्यास करे कि : 'शरीर मेरा नहीं, पाँच भूतों का है। वस्तुएँ मेरी नहीं, ये मेरे से पहले भी थीं और मैं मरूँगा तब भी यहीं रहेंगी... जिसका सर्वस्व है उसको रिझाने के लिए मैं काम करता हूँ...' ऐसा करने से सेवा करते-करते भी साधक का मन निर्वासनिक सुख का एहसास कर सकता है।

भक्तिमार्गी साधक भक्ति करते-करते ऐसा अभ्यास करे कि : 'अनंत ब्रह्माण्डनायक भगवान मेरे अपने हैं। मैं भगवान का हूँ तो आवश्यकता मेरी कैसी ? मेरी आवश्यकता भी भगवान की आवश्यकता है, मेरा शरीर भगवान का शरीर है, मेरा घर भगवान का घर है, मेरा बेटा भगवान का बेटा है, मेरी बेटी भगवान की बेटी है, मेरी इज्जत भगवान की इज्जत है तो मुझे चिन्ता किस बात की ?' ऐसा अभ्यास करके भक्त निश्चिंत हो सकता है।

योगी प्रतिदिन नियत समय पर धारणा-ध्यान-समाधि का अभ्यास करे तो उसका विवेक जगता है। विवेक जगता है तब संसार के भोगों के प्रति वैराग्य आता है। विवेक-वैराग्य के उदय होने से आत्मा-परमात्मा की अनुभूति करने की योग्यता विकसित हो जाती है।

ऐसे ही ज्ञानमार्ग का साधक अभ्यास करे कि : 'जो कुछ दिख रहा है वह भगवान की आह्लादिनी शक्ति की, प्रकृति की लीला है। जो कुछ दिखता है वह सब माया है। अस्ति, भाति, प्रिय... इसमें चैतन्य की सत्ता है और सब नाम-रूप माया है। संसार के व्यवहार एवं मन-बुद्धि के जगत में उलझना मेरा कर्त्तव्य नहीं है। मन के फुरने और जगत के व्यवहार भिन्न-भिन्न होते हैं लेकिन उनकी गहराई में उनका दृष्टा, साक्षी, अभिन्न आत्मा मैं हूँ।'

कर्मयोग, भक्तियोग, ज्ञानयोग, कुण्डलिनी योग... चाहे कोई भी योग क्यों न हो, अभ्यास की आवश्यकता तो सबमें है। यदि आत्माभिमुख होने का अभ्यास है तो फिर बाह्य वातावरण चाहे कैसा भी विलासी लगता हो, पर मनुष्य भीतर से परमात्मा में गोता मार सकता है। यदि अभ्यास की तीव्रता नहीं हो तो फिर मनुष्य सब छोड़कर गंगा-यमुना किनारे चला जाए फिर भी परमात्म-तत्त्व में विश्रान्ति पाना उसके लिए कठिन हो जाता है।

किसीकी निंदा करने से, किसी पर दोषारोपण करने से चित्त उद्विग्न हो जाता है क्योंकि निंदा करने से मन नीचे के केन्द्रों में चला जाता है।

चैतन्य महाप्रभु का एक प्यारा शिष्य था- पुण्डरीक। उस पुण्डरीक को देखकर दूसरे शिष्यों के मन में हुआ : 'गुरु महाराज इसको देखकर विशेष छलकते हैं, प्रसन्न होते हैं। चलो, आज इसके घर चलें।'

पुण्डरीक के घर गदाधर और मुकुन्द नाम के दो गुरुभाई गये। उस समय पुण्डरीक अपने घर पर एक सुन्दर, सुसज्जित शैया पर आराम कर रहा था। कमरा भी इस तरह सजा हुआ था कि मानो, किसी अति विलासी करोड़ाधिपति व्यक्ति का हो। कमरा देखकर गदाधर को हुआ : 'यह चैतन्य महाप्रभु का शिष्य कैसे ? यह तो अति विलासी आदमी लग रहा है !' मुकुन्द को हुआ : 'पुण्डरीक सो रहा है... बाहर से तो वह विलासी वातावरण में दिख रहा है किन्तु चैतन्य महाप्रभु विलासी आदमी से प्यार नहीं करते। भीतर से जरूर भगवान् में इसकी प्रीति होगी।' ऐसा मन में सोचते हुए मुकुन्द ने 'हरि बोल... हरि बोल...'

की मधुर ध्वनि चालू की।

पुण्डरीक की नींद खुल गयी और वह कूदकर पलंग से उतरा। उसकी आँखें बंद हो गयीं और वह भावविभोर होकर हरिनाम-किर्तन में तल्लीन हो गया। यह उसके अभ्यास का ही तो परिणाम था!

विक्रम संवत् ११०० के इर्द-गिर्द की घटना है :

आचार्य श्रीधर स्वामी बड़े प्रसिद्ध संत हो गये हैं, जिन्होंने श्रीमद्भगवद्गीता पर टीका भी लिखी है।

उनका जन्म किस कुल में हुआ था, उसका पता नहीं है। बाल्यकाल में उनका मस्तिष्क पूर्ण विकसित नहीं हुआ था। अपनी किशोरावस्था में वे एक तुच्छ पात्र में तेल लिये हुए कहीं जा रहे थे। उसी समय उस राज्य के राजा और वजीर भगवान की कृपा के विषय में परस्पर चर्चा करते हुए सरिता के किनारे टहल रहे थे।

मंत्री का कहना था कि अगर भगवान रहमत कर दे, भगवद्-भक्ति का अभ्यास हो जाय तो बुद्धू-से-बुद्धू आदमी भी चतुर बन सकता है, निर्धन-से-निर्धन आदमी बड़े धन को पा सकता है, बाहर से निर्धन-सा दिखाई देता व्यक्ति भी बड़े धनवानों को दान कर सकता है, निरक्षर होते हुए भी साक्षरों को पढ़ा सकता है, अपरिचित होते हुए भी बड़े-बड़े परिचितों का मार्गदर्शन कर सकता है।

जीवन में ईश्वर-चिंतन का अभ्यास अगर आ जाय तो आदमी का भाग्य बदल जाए। फिर कैसी परिस्थिति में वह पैदा हुआ है इसका महत्त्व नहीं है वरन् अभी उसको कैसा वातावरण मिला है उसका महत्त्व है। उसके पास कितना धन-वैभव है उसका महत्त्व नहीं है वरन् अभी उसका संग कैसा है उसका महत्त्व है।

राजा ने कहा : ''यह कैसे हो सकता है कि अयोग्य योग्य हो जाए ? अगर भगवान का भजन करने से अयोग्य भी योग्य हो सकता है तो यह लड़का जो अयोग्य पात्र में तेल लिये जा रहा है, बड़ा मूर्ख लग रहा है, क्या यह योग्य हो सकता है ?''

वजीर : ''अगर इसको भगवान के भजन का रंग लगा दिया जाए, भजन के अभ्यास में प्रीति करा दी जाए तो यह भी योग्य हो सकता है।''

अनंत जन्मों की वासनाएँ इस जीव के अंतःकरण में एकत्रित हैं। ये एक-दो दिन में तो नहीं छूटेंगी। इसलिए इस अंतःकरण से वासनाओं को निवृत्त करने के लिए अभ्यास की जरूरत है।

दैवयोग कहो, भगवान की लीला कहो अथवा श्रीधर का प्रारब्ध कहो... उस बच्चे को राज्य की तरफ से भगवान की भक्ति का रंग लगा दिया गया।

अभ्यास करते-करते उस बालक का चित्त भगवान की भक्ति से रंग गया। समय बीतता गया, योग्यता विकसित होती गयी और वही बालक आगे चलकर श्रीधर स्वामी के रूप में पहचाना जाने लगा।

समय आने पर उनका विवाह हो गया। शादी के पश्चात् वे गृहस्थी की गाड़ी चलाने लगे। वे गीता, भागवत, पुराण आदि का नित्य पाठ व स्वाध्याय करते थे। समय पाकर उनकी पत्नी गर्भवती हुई किन्तु शिशु को जन्म देते ही वह परलोक सिधार गयी। श्रीधर स्वामी को हुआ कि : 'चलो, अच्छा हुआ। भगवान ने पत्नी को अपने चरणों में बुलाकर मुझे भजन करने का मौका दे दिया।'

अब वे अपनी दैनिक प्रवृत्ति करते हुए शिशु को पालने लगे। किन्तु धीरे-धीरे अभ्यास का इतना बल बढ़ा कि शिशु को पालना-पोसना भी अब उन्हें भारी लगने लगा। वे विचारने लगे : 'एक शिशु के कारण मैं अपना ध्यान-भजन,

एकांत समाधि छोड़ दूँ ?' अभ्यास की तीव्रता से वैराग्य ने जोर पकड़ा और उन्होंने सोचा : 'शिशु को छोड़कर चला जाऊँ।' अब बालक को छोड़कर वे संन्यास लेने के लिए काशी की ओर प्रस्थान करने को उद्यत हुए। फिर उनके मन में आया : 'इस नन्हें-से शिशु को घर में अकेला छोड़कर जा रहा हूँ... इसकी माँ भी चल बसी है, क्या करूँ ?' किन्तु अभ्यास ने कहा : 'माँ चल बसी है तो क्या हुआ ? कई जन्मों में इसकी कितनी ही माताएँ हुई होंगी ? कितने ही पिता बने होंगे ? सच्चे पिता तो सबकी रखवाली करते हैं फिर क्यों तू 'अपना बेटा' करके फँसता है ?'

इतने में वहाँ एक घटना घटी। छत पर से लुढ़कता हुआ एक अण्डा गिरा और वह फूट गया। उसमें से पक्षी के बच्चे ने चोंच बाहर निकाली। वह भूख के कारण गर्दन हिलाने लगा। इतने में अण्डे से जो रस निकला उस चिकनाहट में एक मक्खी आकर फँसी जिसे उस नवजात बच्चे ने अपनी चोंच में ले लिया।

आत्म-अनात्म का विचार करके, मन की चंचल दशा को नियंत्रित करने का अभ्यास हो जाए तो मनुष्य सर्वोपरि सिद्धिरूप आत्मज्ञान को पा लेता है।

श्रीधर स्वामी को हुआ : 'एक पक्षी के बच्चे के जीवन को बचाने के लिए परमात्मा की इतनी व्यवस्था है तो क्या मनुष्य के शिशु की रखवाली वह नहीं करेगा ?' वे शिशु को छोड़कर चल दिये। फिर तो उस शिशु का ऐसा सुंदर लालन-पालन हुआ कि पहले तो केवल एक पिता ही उसे स्नेह करता था किन्तु अब पूरा गाँव उससे स्नेह करने लगा।

श्रीधर स्वामी ने काशी में जाकर वेदान्त का श्रवण-मनन-निदिध्यासन किया। भक्ति में भी वे उतने ही आगे थे। उनके ग्रंथ पढ़ें तो पता चलता है कि वेदान्त के दिव्य ज्ञान के साथ-साथ भक्ति की दिव्य भावना भी उनके शास्त्रों से छलकती है।

श्रीधर स्वामी किस कुल के थे, इसका पता नहीं है। बाल्यकाल में वे मंदबुद्धि थे किन्तु जब भगवान के रास्ते पर चलने का अभ्यास किया तो महान् टीकाकार श्रीधर स्वामी के रूप में प्रसिद्ध हो गये। अभ्यास की बलिहारी है !

'श्रीयोगवाशिष्ठ महारामायण' में आता है कि अनंत जन्मों की वासनाएँ इस जीव के अंतःकरण में एकत्रित हैं। ये एक-दो दिन में तो नहीं छूटेंगी। इसलिए इस अंतःकरण से वासनाओं को निवृत्त करने के लिए अभ्यास की जरूरत है।

एक बार कार्त्तिक क्षेत्र में संतों की परिषद् हुई थी। उनमें आपस में विचार-विमर्श हो रहा था कि :

'भगवान विष्णु की नाभि से ब्रह्माजी प्रगट हुए हैं और नारदजी ब्रह्माजी के मानस पुत्र हैं। नारदजी ने ध्रुव को मंत्र दिया तो ध्रुव का काम छः महीने में बन गया और हम लोग वर्षों से जटाएँ बढ़ाये हुए मंत्रजाप कर रहे हैं फिर भी हमारा काम नहीं हो रहा।'

एक ने कहा : ''भाई ! यह तो जान-पहचान का जमाना है। भगवान विष्णु ने देखा कि ध्रुव को नारद ने मंत्र दिया है तो वे जल्दी प्रसन्न हो गये।''

दूसरे ने कहा : ''नहीं नहीं, ऐसी बात नहीं है। तुम भगवान में दोष देखते हो, इसका मतलब यह है कि तुम्हारी बुद्धि में दोष है।''

तीसरे ने कहा : ''तो फिर क्या कारण है कि ध्रुव को छः महीने में भगवान मिल गये और हमको बरसों बीत गये हैं फिर भी नहीं मिल रहे ?''

इतने में एक मल्लाह बहुत ही सुंदर नाव लेकर आया और बोला :

''महापुरुषों ! मैं यह नाव लेकर आया हूँ। अगर आप कृपा करें तो इसका उद्घाटन हो जाये।''

किसीकी निंदा करने से, किसी पर दोषारोपण करने से चित्त उद्विग्न हो जाता है

क्योंकि निंदा करने से मन नीचे के केन्द्रों में चला जाता है। आप सागर की ऊपरी सतह पर तो घण्टों भर तैर सकते हैं लेकिन सागर की गहराई में ज्यादा देर नहीं रह सकते। ऐसे ही ऊपर के केन्द्रों में, समाधि में, भाव में, प्रभु-प्रेम में आप घण्टों भर रह सकते हैं, दिन भर रह सकते हैं महीना भर रह सकते हैं लेकिन काम में, क्रोध में आप घण्टा भर भी नहीं रह सकते।

संत लोग बैठ गये उस नाव में। मल्लाह नाव को खेते-खेते ऐसे स्थल पर ले गया जहाँ कुछ द्वीप थे और उन द्वीपों पर थोड़ी-थोड़ी अस्थियाँ पड़ी हुई थीं। किसी संत ने पूछा :

''इन द्वीपों पर थोड़ी-थोड़ी अस्थियाँ पड़ी हुई हैं ! क्या बात है ?''

मल्लाह : ''महाराज ! यहाँ एक तपस्वी ने तप करते-करते अपने तन को इतना सुखा डाला था कि उसके प्राण-पखेरू उड़ गये थे और अस्थियाँ रह गयी थीं। फिर वह बार-बार जन्म लेकर इन्हीं द्वीपों पर मृत्युपर्यंत तप करता रहा। इस तरह उसने अपने ९९ जन्मों तक कठोर तप किया। उसी तपस्वी के ९९ जन्मों के अस्थिपिंजरों का यह ढेर है।''

संत : ''वह तपस्वी कौन था ?''

मल्लाह : ''वह तपस्वी था उत्तानपाद राजा का पुत्र ध्रुव। ९९ जन्मों का उसका अभ्यास था अतः १०० वें जन्म में छः महीने के अभ्यास से ही उसे परमात्म-दर्शन हो गये।''

इस प्रकार उन संतों के संदेह का निवारण हो गया। मल्लाह के रूप में आये हुए भगवान ने कहा : ''हमारे यहाँ जान-पहचान से नहीं वरन् साधक के अभ्यास की दृढ़ता से काम होता है। आपका अभ्यास बिखरा हुआ है, इसलिए मैं नहीं आता। लेकिन जब मेरा चिंतन करते-करते आप लोगों ने मेरी समता के विषय में संदेह किया, तब आप लोगों का चित्त कहीं भ्रमित न हो जाए इसलिए मैं मल्लाह के रूप में प्रत्यक्ष होकर आप लोगों को सही बात बताने आया हूँ।''

यह कहकर भगवान अदृश्य हो गये।

आपको यदि किसीके जीवन में उन्नति दिखती है तो समझ लेना कि उसके जीवन में अभ्यास की तीव्रता है। जिसका जिस विषय में अभ्यास होता है, उसी विषय में वह पारंगत होता है। छोटे-छोटे विषयों का अभ्यास करने से उन छोटे-छोटे विषयों पर ही अधिकार हो पाता है लेकिन मन का साक्षी होने का अभ्यास अगर हो जाए तो मन को जीतने की शक्ति आ जाती है और जिसने मन को जीत लिया फिर उसे कुछ भी जीतना शेष नहीं रह जाता।

अतः जप का अभ्यास, ज्ञान का अभ्यास, आत्मशांति पाने का अभ्यास, श्वासोछ्वास को गिनने का अभ्यास... मन को निर्दोष बनाने के ये सुंदर उपाय हैं। जो अभ्यास के महत्त्व को जानते हैं वे महानता को छू लेते हैं। आप भी लग जाओ।

मन जितना शक्तिशाली है, उस पर विजय पाना भी उतना ही महत्त्वपूर्ण है। मन को हराने की कला जिस मानव में आ जाती है, वह मानव महान् हो जाता है।

देश-विदेशों में टी. वी. चैनलों पर पू. बापू के सत्संग-कार्यक्रम

SONY टी. वी. चैनल पर 'ऋषि प्रसाद' सत्संग-कार्यक्रम सुबह ७-३०. लंदन के समयानुसार सुबह ७-३० यूरोप एवं अफ्रीका में। न्यूयॉर्क के समयानुसार सुबह ७-३० अमेरिका एवं केनेडा में। तदुपरांत, अमेरिका में T. V. Asia चैनल पर इस्टर्न टाईम के मुताबिक सोमवार, बुधवार, शनिवार को सुबह ९ बजे तथा Asian-American Broadcasting Company पर इस्टर्न टाईम के मुताबिक हररोज सुबह ६ बजे एवं सुबह १० बजे। भारत के भाई-बहन विदेशों में रहनेवाले अपने सगे-संबंधियों, परिचितों-मित्रों को खबर कर सकते हैं।

सर्वांगीण विकास की कुंजी

- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

जिस प्रकार गन्ने में रस होता है उसी प्रकार हमारी नसों में वीर्य। यह जितना पुष्ट एवं गाढ़ा होता है, उतना ही व्यक्ति का जीवन हर क्षेत्र में चमकता है।

शरीर में व्याप्त इस अमूल्य धातु की रक्षा करना 'ब्रह्मचर्य' कहलाता है।

महर्षि वेदव्यासजी के अनुसार :

ब्रह्मचर्यं गुप्तेन्द्रियस्योपस्थस्य संयमः।

अर्थात् विषय-इन्द्रिय द्वारा प्राप्त होनेवाले सुख का संयमपूर्वक त्याग करना ब्रह्मचर्य है।

प्राणीविज्ञान (Zoology) के अनुसार, प्राणी द्वारा किया गया भोजन उसकी पाचन नली में एकत्रित होता है। तत्पश्चात् उसके द्वारा श्वास के साथ जो आक्सीजन गैस ग्रहण की जाती है उसीसे पाचन नली में एकत्रित भोजन का पाचन होता है जिसे 'जारण क्रिया' (Oxygination) भी कहते हैं। पाचन-क्रिया के बाद प्राणी द्वारा किये गये भोजन के तीन हिस्से हो जाते हैं : स्थूल, मध्यम तथा सूक्ष्म। इन तीन हिस्सों में से भोजन के स्थूल हिस्से को प्राणी मल के रूप में विसर्जित कर देता है, मध्यम हिस्से से मांस (चर्बी) का निर्माण होता है तथा सूक्ष्म हिस्से से रक्त बनता है। जब रक्त का भी सूक्ष्मीकरण होता है तो उसमें से वीर्य बनता है। विज्ञानियों के अनुसार ३२ कि.ग्रा. भोजन से ८०० ग्राम रक्त बनता है और ८०० ग्राम रक्त से २० ग्राम वीर्य बनता है।

प्राणियों द्वारा किये गये भोजन के पाचन तथा मल-विसर्जन के बाद शरीर में पचे हुए भोजन के दो हिस्सों से शरीर के अलग-अलग भागों का विकास होता है। मध्यम हिस्से द्वारा मांस इत्यादि का तथा सूक्ष्म हिस्से द्वारा मानसिक एवं बौद्धिक अवयवों का विकास होता है।

इस तथ्य से यह स्पष्ट हो जाता है कि भोजन के अति सूक्ष्म हिस्से से उत्पन्न धातु 'वीर्य' का सीधा सम्बन्ध प्राणी के सूक्ष्म शरीर (मन-बुद्धि) के साथ है। भारत के ऋषियों ने इसीको 'ओज' नाम दिया है।

हमारे स्थूल शरीर को चलाने के लिए सूक्ष्म शरीर (मन-बुद्धि) की आवश्यकता होती है। स्थूल शरीर कोई भी चेष्टा करने के लिए स्वतंत्र नहीं होता। प्राणी के सभी कार्य उसके मन तथा बुद्धि के संकेतों के अनुसार संपादित होते हैं। यही कारण है कि रात्रि में मन के सो जाने पर अथवा बेहोशी

> *स्थूल शरीर को कार्य के लिए प्रेरित करनेवाले मन-बुद्धि का जितना अधिक विकास होगा, व्यक्ति के द्वारा उतने ही श्रेष्ठ कार्य संपन्न होंगे तथा उसका प्रभाव बढ़ेगा।*

> *पश्चिमी देशों की भोग-प्रवृत्ति फ्रायड के घृणित मनोविज्ञान के प्रचार से तथा भारत के तथाकथित दार्शनिकों द्वारा उस पर धार्मिक मुहर लगा देने से आज दिन-प्रतिदिन भारतीय युवा पीढ़ी का पतन होता जा रहा है।*

आ जाने पर स्थूल शरीर कोई भी चेष्टा नहीं करता, मृत की भाँति पड़ा रहता है । इस प्रकार हम समझ सकते हैं कि स्थूल शरीर (इन्द्रियों) को कार्य के लिए प्रेरित करनेवाले मन-बुद्धि का जितना अधिक विकास होगा, व्यक्ति के द्वारा उतने ही श्रेष्ठ कार्य संपन्न होंगे तथा उसका प्रभाव बढ़ेगा ।

कम उम्र से ही वीर्यनाश करने की बुरी आदतों में फँसे हुए लोगों की यादशक्ति मन्द पड़ जाती है । कोई भी कार्य करने में उनमें उत्साह नहीं रहता । ऐसे व्यक्ति छोटे-छोटे निर्णय करने में भी असफल हो जाते हैं और अन्ततः उनकी अविकसित बुद्धि उन्हें आत्महत्या तक करने को प्रेरित कर देती है ।

कम उम्र से ही वीर्यनाश करने की बुरी आदतों में फँसे हुए लोग इसके प्रत्यक्ष उदाहरण हैं । ऐसे लोगों की यादशक्ति मन्द पड़ जाती है । कोई भी कार्य करने में उनमें उत्साह नहीं रहता । ऐसे व्यक्ति छोटे-छोटे निर्णय करने में भी असफल हो जाते हैं और अन्ततः उनकी अविकसित बुद्धि उन्हें आत्महत्या तक करने को प्रेरित कर देती है ।

इसी बात को ध्यान में रखकर हमारे ऋषियों ने चार आश्रमों (ब्रह्मचर्य, गृहस्थ, वानप्रस्थ तथा संन्यास) की परम्परा रखी और इनमें ब्रह्मचर्य आश्रम को प्रथम स्थान दिया ।

उस समय की विवाह-परम्परा वर्त्तमान की भाँति मात्र इन्द्रिय-सुखों की पूर्ति के लिए नहीं थी । तेजस्वी सन्तान को जन्म देकर ईश्वर की सृष्टि में भागीदार बनते हुए एक-दूसरे के अन्तरतम में छिपे हुए परम प्रकाश को जागृत करने में सहयोगी बनना चाहिए- यही उस काल की वैवाहिक मान्यता थी ।

प्राचीन काल में विद्यार्थी गुरुकुलों में जाकर २५ वर्ष की आयु तक पूरी तरह से ब्रह्मचर्य का पालन करते थे । गृहस्थ आश्रम में प्रवेश करने के बाद भी वे गुरुकुल से प्राप्त वैदिक शिक्षा के अनुसार अपने जीवन में संयम को महत्त्वपूर्ण स्थान देते थे । उस समय की विवाह-परम्परा वर्त्तमान की भाँति मात्र इन्द्रिय-सुखों की पूर्ति के लिए नहीं थी । तेजस्वी सन्तान को जन्म देकर ईश्वर की सृष्टि में भागीदार बनते हुए एक-दूसरे के अन्तरतम में छिपे हुए परम प्रकाश को जागृत करने में सहयोगी बनना चाहिए- यही उस काल की वैवाहिक मान्यता थी ।

गृहस्थ आश्रम विषय-लोलुपता का माध्यम न बने इसीलिए ऋषियों ने नारी को अपने पति में परमेश्वर तथा पुरुष को अपनी पत्नी में लक्ष्मीजी का रूप देखने की शिक्षा दी ।

पश्चिमी देशों की भोग-प्रवृत्ति फ्रायड के घृणित मनोविज्ञान के प्रचार से तथा भारत के तथाकथित दार्शनिकों द्वारा उस पर धार्मिक मुहर लगा देने से आज दिन-प्रतिदिन भारतीय युवा पीढ़ी का पतन होता जा रहा है ।

फ्रायड जैसे सनकी मनोवैज्ञानिकों, 'संभोग से समाधि' की हवा फैलानेवाले तथाकथित दार्शनिकों तथा अश्लील फिल्मों के खुले प्रदर्शन के फलस्वरूप आज भारत जैसे देश में बलात्कार तथा अवैधानिक शारीरिक सम्बन्धों की घटनाएँ बढ़ती जा रही हैं ।

यह एक सर्वमान्य सिद्धान्त है कि हम जैसा साहित्य पढ़ते हैं, जैसा दृश्य देखते हैं, जैसी बातें सुनते रहते हैं तथा जैसा संग करते हैं उसके अनुसार हमारे आचरण का निर्माण होता है । गाँधीजी बचपन में एक ही बार 'सत्यवादी हरिश्चन्द्र'

का नाटक देखकर आजीवन सत्यवक्ता बन गये। महा कामी तुलसीदास को उनकी पत्नी रत्नावली के दो वचनों ने महान् संत बना दिया। माता जीजाबाई द्वारा दी गई सत्शास्त्र पढ़ने की प्रेरणा तथा सुनाई गई वीरता की कहानियों ने छत्रपति शिवाजी को भारतीय इतिहास का चमकता हुआ सितारा बना दिया।

जीवन को सन्मार्ग पर प्रेरित करनेवाले ये सभी साधन दुर्भाग्यवश भोगवादी आँधी में छूट गये हैं। भारत का किशोर वर्ग अश्लील फिल्मों, गन्दे साहित्य एवं कुसंग के कारण युवावस्था की सीढ़ी पर कदम रखते ही फिसलकर पतन की खाई में चला जाता है। कल्पना की ऊँची उड़ानों तथा क्षणिक सुखों की पूर्ति के लिए वह ब्रह्मचर्य की महिमा को भूल जाता है और अंततः हाथ लगती है - स्वप्नदोष, शीघ्रपतन, नपुंसकता एवं एड्स जैसे रोगों की सूची तथा निराशा की घड़ियाँ।

'संभोग से समाधि' की हवा फैलानेवाले तथाकथित दार्शनिकों तथा अश्लील फिल्मों के खुले प्रदर्शन के फलस्वरूप आज भारत जैसे देश में बलात्कार तथा अवैधानिक शारीरिक सम्बन्धों की घटनाएँ बढ़ती जा रही हैं।

अज्ञानतावश अश्लील दृश्यों, गन्दे साहित्य अथवा कुसंग में फँस जाने के कारण इस आँधी की चपेट में आनेवाले तथा इससे छुटकारा पाने के इच्छुक व्यक्तियों के लिए आगामी अंकों में ताड़ासन, पादपश्चिमोत्तानासन तथा वीर्यरक्षा के अनेक अन्य सुलभ व सरल उपायों का विस्तृत विवरण दिया जायेगा जिनके नियमित अभ्यास से आप अपने शरीर के इस अनमोल सार तत्त्व की सुरक्षा करके तेजस्वी जीवन जी सकते हैं। (क्रमशः)

महत्त्वपूर्ण निवेदन : सदस्यों के डाक पते में परिवर्तन अगले अंक के बाद के अंक से कार्यान्वित होगा। जो सदस्य ८० वें अंक से अपना पता बदलवाना चाहते हैं, वे कृपया जून तक अपना नया पता भिजवा दें।

योगामृत

बिना दवा स्मरणशक्ति का विकास

- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

परब्रह्म परमात्मा में सोलह कलाएँ होती हैं। सृष्टि में स्थित प्रत्येक वस्तु तथा जीव उन सोलह कलाओं में से कुछ कलाओं के साथ जीवित अथवा स्थित रहते हैं। अलग-अलग वस्तुओं तथा जीवों में ईश्वर की अलग-अलग कलाएँ विकसित होती हैं। उन कलाओं में एक विशेष कला है स्मृतिकला।

स्मृतिकला तीन प्रकार की होती है : तात्कालिक स्मृति, अल्पकालिक स्मृति तथा दीर्घकालिक स्मृति।

कई जीवों में अल्पकालिक अथवा तात्कालिक स्मृतिकला ही विकसित होती है परन्तु मनुष्य में स्मृतिकला के तीनों प्रकार विकसित होते हैं। अतः मनुष्य को प्रकृति का सर्वश्रेष्ठ प्राणी कहा जाता है।

मनोवैज्ञानिक विश्लेषणानुसार, 'कुछ याद रखना' एक प्रकार की जटिल मानसिक प्रक्रिया है। स्मरणशक्ति अर्थात् सुनी, देखी एवं अनुभव की हुई बातों का वर्गीकरण करके मस्तिष्क में उन्हें

संगृहीत करना तथा भविष्य में जब भी उनकी आवश्यकता पड़े उन्हें फिर से जान लेना।

स्मृति के लिए दिमाग का जो हिस्सा कार्य करता है उसमें एसीटाइलकोलीन, डोयामीन तथा प्रोटीन्स के माध्यम से एक रासायनिक क्रिया होती है। एक प्रयोग के द्वारा यह भी सिद्ध हुआ है कि मानव-मस्तिष्क की कोशिकाएँ आपस में जितनी सघनता से गुंथित होती हैं उतनी ही उसकी स्मृति का विकास होता है।

मानसिक विशेषज्ञों के अनुसार, प्रायः सभी प्रकार के मानसिक रोग स्मृति से जुड़े होते हैं, जैसे कि चिन्ता, मानसिक अशांति आदि। ऐसे ढंग के व्यक्तियों में कोई भी कार्य प्रारम्भ करने से पूर्व इतनी घबराहट बढ़ जाती है कि वे समय पर जरूरत की चीजों को अच्छी तरह से याद नहीं रख सकते।

भ्रामरी प्राणायाम द्वारा मस्तिष्क की कोशिकाओं में स्पंदन होता है जिसके फलस्वरूप एसीटाइलकोलीन, डोयामीन तथा प्रोटीन के बीच होनेवाली रासायनिक क्रिया को उत्तेजना मिलती है तथा स्मरणशक्ति का चमत्कारिक विकास होता है।

विद्यार्थियों में यह समस्या अधिक पायी जाती है। परीक्षाकाल निकट आने पर अथवा परीक्षा-पत्र को देखकर घबरा जाने से अनेक विद्यार्थी याद किये हुए पाठ भी भूल जाते हैं। इस प्रकार हम यह कह सकते हैं कि स्मरणशक्ति पर मानसिक रोगों का सीधा प्रभाव पड़ता है।

हमारे प्राचीन ऋषियों ने स्मरणशक्ति को बढ़ाने के लिए प्राणायाम, ध्यान, धारणा आदि अनेक यौगिक प्रयोगों का आविष्कार किया है। उन्होंने तो ध्यान के द्वारा एक ही स्थान पर बैठे-बैठे अनेक ग्रहों एवं लोकों की खोज कर डाली।

महर्षि वाल्मीकि ने ध्यान के द्वारा अपनी बौद्धिक शक्तियों का इतना विकास किया कि श्रीरामावतार से पूर्व ही उन्होंने श्रीराम की जीवनी को 'रामायण' के रूप में लिपिबद्ध कर दिया।

इसी प्रकार महर्षि वेदव्यासजी ने श्रीमद्भागवत महापुराण में आज से हजारों वर्ष पूर्व ही कलियुगी मनुष्यों के लक्षण बता दिये थे।

हमें मानना पड़ेगा कि हमारा ऋषिविज्ञान इतना विकसित था कि उसके सामने आज के विज्ञान की कोई गणना ही नहीं की जा सकती।

महर्षि वाल्मीकि तथा वेदव्यासजी द्वारा रचित ये दो ग्रंथ- रामायण तथा महाभारत, उनकी चमत्कारिक तथा विकसित स्मरणशक्ति के उदाहरण-स्वरूप हैं।

स्मरणशक्ति को बढ़ाने-वाला भ्रामरी प्राणायाम हमारे ऋषियों की एक विलक्षण खोज है। भ्रामरी प्राणायाम द्वारा मस्तिष्क की कोशिकाओं में स्पंदन होता है जिसके फलस्वरूप एसीटाइलकोलीन, डोयामीन तथा प्रोटीन के बीच होनेवाली रासायनिक क्रिया को उत्तेजना मिलती है तथा स्मरणशक्ति का चमत्कारिक विकास होता है।

कैसे करें भ्रामरी प्राणायाम ?

यह प्राणायाम करने के लिए सर्वप्रथम पाचनशक्ति मजबूत करने की आवश्यकता होती है। पाचनतंत्र में ग्रहण किये गये खाद्य पदार्थों को पचाने तथा उन्हें निष्कासित करने की पूर्ण क्षमता होनी चाहिए।

जिसका पाचनतंत्र कमजोर हो, उसे सर्वप्रथम 'प्रातः पानी-प्रयोग' तथा पाद-पश्चिमोत्तानासन के द्वारा अपने पाचनतंत्र को सुदृढ़ बनाना चाहिए। यह प्राणायाम करनेवाले के लिए उपयुक्त पोषक तथा सात्त्विक आहार लेना भी अति आवश्यक है क्योंकि शुद्ध तथा पोषक

तत्त्व न मिलने के कारण मस्तिष्क की कार्यक्षमता मन्द पड़ जाती है। अतः प्राणायाम करनेवाले व्यक्ति के दैनिक भोजन में कार्बोहाइड्रेट, प्रोटीन, विटामिन तथा खनिज तत्त्वों की उपयुक्त मात्रा उसकी शारीरिक क्षमता के अनुसार होनी चाहिए।

हमारे प्राचीन ऋषियों ने स्मरणशक्ति को बढ़ाने के लिए प्राणायाम, ध्यान, धारणा आदि अनेक यौगिक प्रयोगों का आविष्कार किया है। उन्होंने तो ध्यान के द्वारा एक ही स्थान पर बैठे-बैठे अनेक ग्रहों एवं लोकों की खोज कर डाली।

इस प्रकार शुद्ध, सात्त्विक तथा पौष्टिक आहार लेते हुए प्रातः, मध्याह्न एवं सायंकालीन तीनों संध्याओं के समय खाली पेट भ्रामरी प्राणायाम करने से स्मरणशक्ति का चमत्कारिक विकास होता है।

विधि : प्रातःकाल शौच-स्नानादि से निवृत्त होकर कम्बल अथवा ऊन के बने हुए किसी स्वच्छ आसन पर पद्मासन, सिद्धासन अथवा सुखासन में बैठ जायें और आँखें बन्द कर लें।

ध्यान रहे कि कमर व गर्दन एक सीध में रहें। अब दोनों हाथों की तर्जनी (अँगूठे के पासवाली) उँगलियों से अपने दोनों कानों के छिद्रों को बन्द कर लें। इसके बाद खूब गहरा श्वास लेकर कुछ समय तक रोके रखें तथा मुख बन्द करके श्वास छोड़ते हुए भौंरे की तरह 'ॐ...' का लम्बा गुंजन करें।

इस प्रक्रिया में यह ध्यान अवश्य रखें कि श्वास लेने तथा छोड़ने की क्रिया नथुनों के द्वारा ही होनी चाहिए। मुख के द्वारा श्वास लेना अथवा छोड़ना निषिद्ध है।

श्वास छोड़ते समय होठ बंद रखें तथा ऊपर व नीचे के दाँतों के बीच कुछ फासला रखें। श्वास अन्दर भरने तथा रोकने की क्रिया में ज्यादा जबरदस्ती न करें। यथासम्भव श्वास अंदर खींचें तथा रोकें। अभ्यास के द्वारा धीरे-धीरे आपकी श्वास लेने तथा रोकने की शक्ति स्वतः ही बढ़ती जाएगी।

प्रत्येक समय श्वास छोड़ते समय 'ॐ' का गुंजन करें। इस गुंजन द्वारा मस्तिष्क की कोशिकाओं में हो रहे स्पन्दन (कम्पन) पर अपने मन को एकाग्र रखें।

प्रारम्भ में इस प्राणायाम का अभ्यास दस-दस मिनट सुबह-दोपहर अथवा शाम जिस संध्या में समय मिलता हो, नियमित रूप से करें। एक माह बाद प्रतिदिन एक-एक मिनट बढ़ाते हुए तीस मिनट तक यह प्राणायाम कर सकते हैं। किन्तु शारीरिक रूप से कमजोर तथा अस्वस्थ लोगों को प्राणायाम की संख्या का निर्धारण अपनी क्षमता के अनुसार करना चाहिए।

गाँधीजी से एक पत्रकार ने पूछा :

"जब भारत को स्वराज मिल जायेगा तब क्या आप अमरीकी तथा अन्य धर्मप्रचारकों को भारत में बने रहने का समर्थन करेंगे ?"

गाँधीजी ने जवाब दिया :

"यदि वे पूरी तरह से मानवीय कार्यों तथा गरीबों की सेवा करने के बजाय डॉक्टरी सहायता, शिक्षा आदि के द्वारा धर्मपरिवर्तन करेंगे तो मैं निश्चय ही उन्हें चले जाने को कहूँगा। प्रत्येक राष्ट्र का धर्म अन्य किसी राष्ट्र के धर्म के समान ही श्रेष्ठ है। निश्चय ही भारत के धर्म यहाँ के लोगों के लिए पर्याप्त हैं। हमें धर्मपरिवर्तन की कोई आवश्यकता नहीं है।"

[गाँधी वाङ्मय, खण्ड ४५, पृ. ३३९]

योगसिद्ध ब्रह्मलीन ब्रह्मनिष्ठ

प्रातःस्मरणीय पूज्यपाद स्वामी श्री

लीलाशाहजी महाराज : एक दिव्य विभूति

[गतांक का शेष]

१५ अक्तूबर, रविवार की शाम को हाँगकाँग के भक्तों के रुकने के अत्यंत आग्रह के बावजूद पूज्य स्वामीजी जापान जाने के लिए हवाई जहाज में बैठे एवं शाम को ओसाका पधारे। वहाँ १७ अक्तूबर को सिंधी क्लब में रात्रि को ८ से १० बजे तक सत्संग का आयोजन रखा गया जिसका लाभ असंख्य श्रद्धालुओं ने लिया। वहाँ से १८ अक्तूबर को निकलकर टोकियो, योकोहामा में पधारकर दो दिन सत्संग किया। पूज्य स्वामीजी की अमृतवाणी को यहाँ के हिन्दुओं ने खूब प्रेम एवं श्रद्धा से सुना। पूज्य स्वामीजी ने कहा :

''कोई भी महान् व्यक्ति आकाश में से नहीं आता। उसके जीवन पर संत-महापुरुषों के संग एवं सत्शास्त्रों के अभ्यास का बहुत प्रभाव होता है। दुनिया के जितने भी महान् व्यक्ति हुए हैं वे सब सत्शास्त्रों एवं सत्पुरुषों के संग से ही उन्नत हुए हैं। लखनऊ में जब मैं एक सभा में गया था तब पंडित जवाहरलाल नेहरू ने बताया था कि सुंदर पुस्तकें पढ़कर एवं महात्मा गाँधी का संग करके मैंने बहुत पाया है।''

दूसरे दिन पूज्य स्वामीजी ने कलियुग में श्रोताओं पर सत्संग का कैसा असर होता है इसके संदर्भ में संक्षेप में रसप्रद बातें करते हुए कहा :

''सत्संग की महिमा अपार है। जब सत्संग सुनने बैठो तब वृत्तियों पर निगरानी रखनी चाहिए, नहीं तो सत्संग सुनने से क्या लाभ मिलेगा ? कलियुग ने कहा है कि : 'मैं जब भी सत्संग में जाता हूँ तब अपने साथ तीन प्रकार की गोलियाँ ले जाता हूँ। सत्संग में पहले लाल गोली फेंकता हूँ जिससे सत्संग सुनते-सुनते लोगों को नींद आने लगे। किन्तु उपदेशक (वक्ता) भगवन्नाम का उच्चारण करवाकर सत्संगियों को सावधान करता है। तब मैं दूसरी पीली गोली फेंकता हूँ। इसके प्रभाव से लोग बैठे-बैठे ही इधर-उधर ताक-झाँक करने लगते हैं और असावधान हो जाते हैं। यदि उपदेशक धुन या कीर्तन करवाकर लोगों को सावधान कर दे तो फिर मैं तीसरी सफेद गोली फेंकता हूँ। इसके प्रभाव से सत्संगी थोड़े सावधान तो रहते हैं फिर भी उनकी चित्तवृत्ति घर-कुटुंब या दूसरी बाह्य प्रवृत्तियों में बहिर्मुख हो जाती है। वे प्रतीक्षा करते हैं कि महाराज कब सत्संग पूरा करेंगे ? जिनके ऊपर

''भीष्म पितामह के ब्रह्मचर्य का ही प्रभाव था कि स्वयं श्रीकृष्ण भगवान को भी रणभूमि में हथियार न उठाने की प्रतिज्ञा के बावजूद उनके समक्ष हथियार उठाने पड़े।''

मेरी इन गोलियों का प्रभाव नहीं पड़ता वे तो मेरे भी गुरु हैं, देवतास्वरूप हैं।'

कलियुग की इन बातों को ध्यान में रखकर हमेशा तन एवं मन से सावधान होकर सत्संग सुनने बैठना चाहिए। कलियुग की गोलियों का शिकार नहीं होना चाहिए।''

२० अक्तूबर को पूज्य स्वामीजी मनीला पधारे। वहाँ एक सप्ताह रुककर उन्होंने यौगिक क्रियाओं, आसनों एवं स्वास्थ्य संबंधी मार्गदर्शन दिया एवं ब्रह्मचर्य-पालन के नियम बताते हुए कहा :

''दुनिया के जितने भी महान् व्यक्ति हुए हैं वे सब सत्शास्त्रों एवं सत्पुरुषों के संग से ही उन्नत हुए हैं।''

''ब्रह्मचर्य का आधार तन की अपेक्षा मन पर ज्यादा है। अतः अपने मन को नियंत्रण में रखो एवं आदर्श उच्च रखो। ऋषि-मुनियों का कहना है कि ब्रह्मचर्य ब्रह्मदर्शन का द्वार है। उसकी रक्षा करना अत्यंत आवश्यक है। वीर्य की एक बूँद रक्त की तीस बूँदों से बनती है। 'जैसा अन्न वैसा मन' यह कहावत बिल्कुल सच्ची है। गरम मसाले, चटनी, मांस-मछली-अण्डे, चाय-कॉफी जैसे पदार्थों से दूर रहो। भोजन हल्का एवं स्निग्ध लेना चाहिए। वेशभूषा का भी तन-मन पर प्रभाव पड़ता है। सादे, साफ एवं सूती खादी के वस्त्र पहनो। 'योगदर्शन' में लिखा है :

ब्रह्मचर्यप्रतिष्ठायां वीर्यलाभः।

''ब्रह्मचर्य का आधार तन की अपेक्षा मन पर ज्यादा है। अतः अपने मन को नियंत्रण में रखो एवं आदर्श उच्च रखो। ऋषि-मुनियों का कहना है कि ब्रह्मचर्य ब्रह्मदर्शन का द्वार है।''

वीर्य की रक्षा करने से बल एवं तेज बढ़ता है। शरीर में वीर्य ही एक ऐसा तत्त्व है जिसके प्रभाव से मनुष्य जो चाहे पा सकता है। भीष्म पितामह के ब्रह्मचर्य का ही प्रभाव था कि स्वयं श्रीकृष्ण भगवान को भी रणभूमि में हथियार न उठाने की प्रतिज्ञा के बावजूद उनके समक्ष हथियार उठाने पड़े।

कहने का तात्पर्य यह है कि शरीर में जितना वीर्य होता है उतनी ही शक्ति एवं आत्मबल बढ़ता है। ऐसा कहा जाता है कि संसार का सारा आधार वीर्य पर ही है। अतः जिन्हें अपना उद्धार करना हो उन्हें वीर्य की रक्षा करनी ही चाहिए।''

मनीला के भक्त पूज्य स्वामीजी के सत्संग एवं यौगिक क्रियाओं से खूब लाभान्वित हुए। उसके बाद पूज्य स्वामीजी दो दिन बैंकाक एवं दो दिन क्वालालम्पुर (मलेशिया) रुके एवं सिंगापुर में भक्तों के अत्यंत आग्रहवशात् एक सप्ताह ज्यादा रुककर वहाँ के भक्तों को दर्शन-सत्संग का पुनः लाभ दिया।

सिंगापुर से निकलकर एक सप्ताह के लिए इण्डोनेशिया पधारे। वहाँ उन्होंने अपने सत्संग में नारियों को संबोधित करते हुए कहा :

''माताओं ! तुम तो देवियाँ हो। घर की रानियाँ हो। घर बनाना एवं घर की गाड़ी को सुचारु रूप से चलाना यह तुम्हारा कर्त्तव्य है। अच्छे कर्म करो जिससे शुभ संकल्प हों और शुभ संकल्पों से तुम सुखी होओगी। सिनेमा देखना बिल्कुल बंद कर दो। सिनेमा देखने से विचार एवं संकल्प दूषित होते हैं। उसकी जगह भगवान से प्रार्थना करो कि सबका भला करें।

तुम समझती हो कि 'हम सुंदर हैं।' परन्तु सुंदर क्या है ? जिस शरीर को तुम सुंदर समझती हो वह शरीर मृत्यु के बाद सुंदर क्यों नहीं लगता ? क्यों उसे जला दिया जाता है ? जिस शरीर को सुंदर समझती हो, मन ही मन उसकी चमड़ी उतारकर देखो कि अंदर क्या है ? अंदर तो हाड़-मांस, खून एवं रोगों का गंदा कचरा है। सच्चा सौन्दर्य तो सच्चे कर्म ही हैं।'' (क्रमशः)

सबसे श्रेष्ठ संपत्ति : चरित्र

- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

चरित्र मानव की एक श्रेष्ठ संपत्ति है, दुनिया की समस्त संपदाओं में महान् संपदा है। पंचभूतों से निर्मित मानव-शरीर की मृत्यु के बाद, पंचमहाभूतों में विलीन होने के बाद भी जिसका अस्तित्व बना रहता है वह है उसका चरित्र।

चरित्रवान् व्यक्ति ही समाज, राष्ट्र व विश्वसमुदाय का सही नेतृत्व एवं मार्गदर्शन कर सकता है। आज जनता को दुनियावी सुख-भोग व सुविधाओं की उतनी आवश्यकता नहीं है जितनी चरित्र की। अपने चरित्र व सत्कर्मों से ही मानव चिर आदरणीय और पूजनीय हो जाता है।

चरित्रहीन व्यक्ति आत्मसंतोष, आत्मसुख से वंचित रहता है। आत्मग्लानि व अशांति देर-सबेर चरित्रहीन व्यक्ति का पीछा करती ही है। चरित्रवान् व्यक्ति के आसपास आत्मसंतोष, आत्मशांति और श्रद्धालु व सज्जनों का सम्मान वैसे ही मंडराता है जैसे कमल के इर्द-गिर्द भौंरे।

स्वामी शिवानंदजी कहा करते थे :

''मनुष्य जीवन का सारांश है चरित्र। मनुष्य का चरित्र मात्र ही सदा जीवित रहता है। चरित्र का अर्जन नहीं किया गया तो ज्ञान का अर्जन भी नहीं किया जा सकता। अतः निष्कलंक चरित्र का निर्माण करें।''

अपने अलौकिक चरित्र के कारण ही आद्य शंकराचार्य, बुद्ध, स्वामी विवेकानंद, पूज्य लीलाशाहजी बापू जैसे महापुरुष आज भी याद किये जाते हैं।

व्यक्तित्व का निर्माण चरित्र से ही होता है। कितनी ही बाह्य सुंदरता क्यों न हो, कितना ही निपुण गायक क्यों न हो और बड़े-से-बड़ा कवि या वैज्ञानिक क्यों न हो, पर यदि वह चरित्रवान् न हुआ तो समाज में उसके लिए सम्मानित स्थान का सदा अभाव ही रहेगा। चरित्रहीन व्यक्ति आत्मसंतोष और आत्मसुख से वंचित रहता है। आत्मग्लानि व अशांति देर-सबेर चरित्रहीन व्यक्ति का पीछा करती ही है। चरित्रवान् व्यक्ति के आसपास आत्मसंतोष, आत्मशांति और श्रद्धालु व सज्जनों का सम्मान वैसे ही मंडराता है जैसे कमल के इर्द-गिर्द भौंरे, मधु के इर्द-गिर्द मधुमक्खी व सरोवर के इर्द-गिर्द पानी के प्यासे।

चरित्र एक शक्तिशाली उपकरण है जो शांति, धैर्य, स्नेह, प्रेम, सरलता, नम्रता आदि दैवी गुणों को निखारता है। यह उस पुष्प की भाँति है जो अपना सौरभ सुदूर देशों तक विकीर्ण करता है। महान् विचार तथा उज्ज्वल चरित्रवान् व्यक्ति का ओज चुंबक की भाँति प्रभावशाली होता है।

भगवान श्रीकृष्ण ने अर्जुन को निमित्त बनाकर सम्पूर्ण मानव-समुदाय को उत्तम चरित्र-निर्माण के लिए श्रीमद्-भगवद्गीता के १६वें अध्याय में दैवी गुणों का उपदेश किया है जो मानवमात्र के लिए प्रेरणास्रोत है, चाहे वह किसी भी जाति, धर्म अथवा संप्रदाय का हो। उन दैवी गुणों को प्रयत्नपूर्वक अपने आचरण में लाकर कोई भी व्यक्ति महान् बन सकता है।

निष्कलंक चरित्र-निर्माण के लिए नम्रता,

अहिंसा, क्षमाशीलता, गुरुसेवा, शुचिता, आत्मसंयम, विषयों के प्रति अनासक्ति, निरहंकारिता, जन्म-मृत्यु-जरा-व्याधि तथा दुःखों के प्रति अन्तर्दृष्टि, निर्भयता, स्वच्छता, दानशीलता, स्वाध्याय, तपस्या, त्याग-परायणता, अलोलुपता, ईर्ष्या, अभिमान, कुटिलता व क्रोध का अभाव तथा शांति एवं शौर्य जैसे गुण विकसित करने चाहिए।

कार्य करने पर एक प्रकार की आदत का भाव उदय होता है। आदत का बीज बोने से चरित्र का उंदय और चरित्र का बीज बोने से भाग्य का उदय होता है। वर्त्तमान कर्मों से ही भाग्य बनता है इसलिए सत्कर्म करने की आदत बना लें।

चित्त में विचार, अनुभव और कर्म के संस्कार मुद्रित होते हैं। व्यक्ति जो भी सोचता तथा कर्म करता है वह सब यहाँ अमिट रूप से मुद्रित हो जाता है। व्यक्ति के मरणोपरांत भी ये संस्कार जीवित रहते हैं। इनके कारण ही मनुष्य संसार में बार-बार जन्मता-मरता रहता है।

'दुश्चरित्र व्यक्ति सदा के लिए दुश्चरित्र हो गया' - यह तर्क उचित नहीं है। अपने बुरे चरित्र व विचारों को बदलने की शक्ति प्रत्येक व्यक्ति में विद्यमान है। आम्रपाली वेश्या, मुगला डाकू, बिल्वमंगल, और भी कई नाम लिये जा सकते हैं। एक वेश्या के चँगुल में फँसे व्यक्ति बिल्वमंगल से संत सूरदास हो गये। पत्नी के प्रेम में दीवाने थे लेकिन पत्नी ने दो शब्द विवेक के सुनाये तो वे संत तुलसीदास हो गये। आम्रपाली वेश्या भगवान बुद्ध की परम भक्तिन बनकर सन्मार्ग पर चल पड़ी।

बिगड़ी जनम अनेक की सुधरे अब और आज।

यदि बुरे विचारों और बुरी भावनाओं का स्थान अच्छे विचारों और आदर्शों को दिया जाए तो मनुष्य सद्गुण के मार्ग में प्रगति कर सकता है, असत्यभाषी सत्यभाषी बन सकता है, दुश्चरित्र सच्चरित्र में परिवर्तित हो सकता है। डाकू एक नेक इन्सान ही नहीं, ऋषि भी बन सकता है।

व्यक्ति की आदतों, गुणों और आचारों को प्रतिपक्षी भावना (विरोधी गुणों की भावना) से बदला जा सकता है। सतत अभ्यास से अवश्य ही सफलता प्राप्त होती है। दृढ़ संकल्प और अदम्य साहस से जो व्यक्ति उन्नति के मार्ग पर आगे बढ़ता है, सफलता तो उसके चरण चूमती है।

चरित्र-निर्माण का अर्थ होता है आदतों का निर्माण। आदत को बदलने से चरित्र भी बदल जाता है। संकल्प, रुचि, ध्यान तथा श्रद्धा से स्वभाव में किसी भी क्षण परिवर्तन किया जा सकता है। योगाभ्यास द्वारा भी मनुष्य अपनी पुरानी क्षुद्र आदतों को त्यागकर नवीन कल्याणकारी आदतों को ग्रहण कर सकता है।

आज का भारतवासी अपनी बुरी आदतें बदलकर अच्छा इन्सान बनना तो दूर रहा प्रत्युत पाश्चात्य संस्कृति का अंधानुकरण करते हुए वह और ज्यादा बुरी आदतों का शिकार बनता जा रहा है जो राष्ट्र के सामाजिक व नैतिक पतन का हेतु है।

चरित्रवान् व्यक्ति ही समाज, राष्ट्र व विश्वसमुदाय का सही नेतृत्व एवं मार्गदर्शन कर सकता है। आज जनता को दुनियावी सुख-भोग व सुविधाओं की उतनी आवश्यकता नहीं है जितनी चरित्र की।

जिस राष्ट्र में पहले राजा-महाराजा भी जीवन का वास्तविक रहस्य जानने के लिए, ईश्वरीय सुख प्राप्त करने के लिए राज-पाट, भौतिक सुख-सविधाओं को त्यागकर ब्रह्मज्ञानी संतों की खोज करते थे **वहीं विषय-वासना व पाश्चात्य चकाचौंध में लट्टू होकर भारतवासी अपना पतन आप आमंत्रित कर रहे हैं।**

*

सती सावित्री-यमराज संवाद

[२८ जून '९९ : वट सावित्री पूर्णिमा पर विशेष]

- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

महाभारत के वन पर्व में यमराज-सावित्री के वार्तालाप का प्रसंग आता है :

जब यमराज सत्यवान के प्राणों को अपने पाश में बाँध ले चले तब सावित्री भी पीछे-पीछे चलने लगी । उसे अपने पीछे आते देखकर यमराज ने उसे वापस लौट जाने के लिए कई बार कहा किन्तु सावित्री चलती ही रही एवं अपनी धर्मचर्चा से उसने यमराज को भी प्रसन्न कर लिया ।

> *"मन, वचन और क्रिया द्वारा किसी भी प्राणी के प्रति द्रोह न करके सब पर समान रूप से दया करना और दान देना श्रेष्ठ पुरुषों का सनातन धर्म है ।"*

सावित्री बोली : "सत्पुरुषों का संग एक बार भी मिल जाए तो वह अभीष्ट की पूर्ति करानेवाला होता है और यदि उनसे प्रेम हो जाए तो फिर कहना ही क्या ? संत-समागम कभी निष्फल नहीं जाता । अतः सदा सत्पुरुषों के साथ ही रहना चाहिए ।

> *"दूसरों की भलाई करना सनातन सदाचार है, ऐसा मानकर सत्पुरुष प्रत्युपकार की आशा न रखते हुए सदा परोपकार में ही लगे रहते हैं ।"*

देव ! आप सारी प्रजा का नियमन करनेवाले हैं, अतः 'यम' कहलाते हैं । मैंने सुना है कि मन, वचन और क्रिया द्वारा किसी भी प्राणी के प्रति द्रोह न कर[illegible] र समान रूप से दया करना और दान देना श्रेष्ठ पुरुषों का सनातन धर्म है । यों तो संसार के सभी लोग सामान्यतः कोमलता का बर्ताव करते हैं किन्तु जो श्रेष्ठ पुरुष हैं, वे अपने पास आये हुए शत्रु पर भी दया ही करते हैं ।"

यमराज : "कल्याणी ! जैसे प्यासे को पानी मिलने से तृप्ति होती है, उसी प्रकार तेरी धर्मानुकूल बातें सुनकर मुझे प्रसन्नता होती है ।"

सावित्री ने आगे कहा :

"विवस्वान (सूर्यदेव) के पुत्र होने के नाते आपको 'वैवस्वत्' कहते हैं । आप शत्रु-मित्र आदि के भेद को भुलाकर सबके प्रति समान रूप से न्याय करते हैं, इसीसे सारी प्रजा धर्म का आचरण करती है और आप 'धर्मराज' कहलाते हैं । अच्छे मनुष्यों को सत्य पर जैसा विश्वास होता है, वैसा अपने पर भी नहीं होता । अतएव वे सत्य में ही अधिक अनुराग रखते हैं । विश्वास ही सौहार्द का कारण है तथा सौहार्द ही विश्वास का । सत्पुरुषों में सबसे अधिक सौहार्द का भाव होता है इसलिए उन पर सभी विश्वास करते हैं ।"

यमराज : "सावित्री ! तूने जो बातें कही हैं वैसी बातें मैंने और किसीके मुँह से नहीं सुनी हैं। अतः मेरी प्रसन्नता और भी बढ़ गयी है। अच्छा, अब तू बहुत दूर चली आयी है । जा, लौट जा ।"

फिर भी सावित्री ने अपनी धार्मिक चर्चा बंद नहीं की। वह कहती गयी : "सत्पुरुषों का मन सदा धर्म में ही लगा रहता है । सत्पुरुषों के साथ जो समागम होता है वह कभी व्यर्थ नहीं जाता । संतों से कभी किसीको भय नहीं होता । सत्पुरुष सत्य के बल से सूर्य को भी अपने समीप बुला लेते हैं । वे ही अपने

प्रभाव से पृथ्वी को धारण करते हैं। भूत-भविष्य का आधार भी वे ही हैं । उनके बीच में रहकर श्रेष्ठ पुरुषों को कभी खेद नहीं होता। दूसरों की भलाई करना सनातन सदाचार है, ऐसा मानकर सत्पुरुष प्रत्युपकार की आशा न रखते हुए सदा परोपकार में ही लगे रहते हैं।''

''सत्पुरुषों का संग एक बार भी मिल जाए तो वह अभीष्ट की पूर्ति करानेवाला होता है और यदि उनसे प्रेम हो जाए तो फिर कहना ही क्या? संत-समागम कभी निष्फल नहीं जाता।''

सावित्री की बातें सुनकर यमराज द्रवीभूत हो गये और बोले : ''पतिव्रते ! तेरी ये धर्मानुकूल बातें गंभीर अर्थ से युक्त एवं मेरे मन को लुभानेवाली हैं। तू ज्यों-ज्यों ऐसी बातें सुनाती जाती है, त्यों-त्यों तेरे प्रति अधिक स्नेह बढ़ता जाता है। अतः तू मुझसे कोई अनुपम वरदान माँग ले।''

कैसी रही हैं भारत की आदर्श नारियाँ! अपने पति को मृत्यु के मुख से लौटाने में यमराज से भी धर्मचर्चा करने का सामर्थ्य रहा है भारत की देवियों में।

सावित्री : ''भगवन् ! अब तो आप सत्यवान के जीवन का ही वरदान दे दीजिए । इससे आपके ही सत्य और धर्म की रक्षा होगी। पति के बिना तो मैं सुख, स्वर्ग, लक्ष्मी तथा जीवन की भी इच्छा नहीं रखती।''

धर्मराज वचनबद्ध हो चुके थे । उन्होंने सत्यवान को मृत्युपाश से मुक्त कर दिया और उसे चार सौ वर्षों की नवीन आयु प्रदान की।

सत्यवान के पिता द्युमत्सेन की नेत्रज्योति लौट आयी एवं उन्हें अपना खोया हुआ राज्य भी वापस मिल गया। सावित्री के पिता को भी समय पाकर सौ संतानें हुईं एवं सावित्री ने भी अपने पति सत्यवान के साथ धर्मपूर्वक जीवन-यापन करते हुए राज्य-सुख भोगा।

इस प्रकार सती सावित्री ने अपने पातिव्रत्य के प्रताप से पति को तो मृत्यु के मुख से लौटाया ही, साथ ही पति के एवं अपने पिता के कुल, दोनों की अभिवृद्धि में भी वह सहायक बनी।

जिस दिन सती सावित्री ने अपने तप के प्रभाव से यमराज के हाथ में पड़े हुए पति सत्यवान को छुड़ाया था, वही दिन 'वट सावित्री पूर्णिमा' के रूप में आज भी मनाया जाता है। इस दिन सौभाग्यवती स्त्रियाँ अपने सौभाग्य की रक्षा के लिए वट वृक्ष की पूजा करती हैं एवं व्रत-उपवास आदि रखती हैं।

कैसी रही हैं भारत की आदर्श नारियाँ ! अपने पति को मृत्यु के मुख से लौटाने में यमराज से भी धर्मचर्चा करने का सामर्थ्य रहा है भारत की देवियों में । सावित्री की दिव्य गाथा यही संदेश देती है कि हे भारत की देवियों ! तुममें अथाह सामर्थ्य है, अथाह शक्ति है। संत-महापुरुषों के सत्संग में जाकर तुम अपनी छुपी हुई उसी शक्ति को जाग्रत करके अवश्य महान् बन सकती हो एवं सावित्री-मीरा-मदालसा की याद को पुनः ताजा कर सकती हो ।

मिलने की तड़प है तो,
खुद को जरा मिटाकर देख।
जो कभी मिटता नहीं,
उससे दिल लगाकर देख ॥
दिल दिलबर का मंदिर है,
सुना है हमने संतों से।
अगर है चाह अनुभव की,
तो सद्गुरु के चरणों में आकर देख ॥

- दीपक 'बाँकी'

हे विद्यार्थियों ! जिज्ञासु बनो

- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

विश्व की सारी बड़ी-बड़ी खोजें - चाहे वे ऐहिक जगत की हों, बौद्धिक जगत की हों, धार्मिक जगत की हों अथवा तात्त्विक जगत की हों - सब खोजें हुई हैं जिज्ञासा से ही। इसलिए अगर अपने जीवन को उन्नत करना चाहते हो तो जिज्ञासु बनो। वे ही लोग महान् बनते हैं, जिनके जीवन में जिज्ञासा होती है।

अगर अपने जीवन को उन्नत करना चाहते हो तो जिज्ञासु बनो। वे ही लोग महान् बनते हैं, जिनके जीवन में जिज्ञासा होती है।

थामस अल्वा एडिसन तुम्हारे जैसे ही बच्चे थे। वे बहरे भी थे। पहले रेलगाड़ियों में अखबार, दूध की बोतलें आदि बेचा करते थे। लेकिन उनके जीवन में जिज्ञासा थी अतः आगे जाकर उन्होंने अनेक आविष्कार किये। बिजली का बल्ब आदि २५०० खोजें उन्हीं की देनें हैं। **जहाँ चाह वहाँ राह।** जिसके जीवन में जिज्ञासा है वह उन्नति के शिखर जरूर सर कर सकता है। जीवन में यदि कोई जिज्ञासा नहीं हो तो फिर उन्नति नहीं हो पाती।

हीरा नामक एक लड़का था, जो किसी सेठ के यहाँ नौकरी करता था। एक दिन उसने अपने सेठ से कहा :

''सेठजी ! मैं आपका २४ घण्टे का नौकर हूँ और मुनीम तो केवल एक-दो घण्टे के लिए आकर आपसे इधर-उधर की बातें करके चला जाता है। फिर भी मेरा वेतन केवल ५०० रूपये है और मुनीम का ५००० रूपये। ऊपर से सुविधाएँ भी उसको ज्यादा। ऐसा क्यों ?''

सेठ : ''हीरा ! तुझमें और मुनीम में क्या फर्क है यह जानना चाहता है तो जा, जरा घोघा बंदरगाह होकर आ। वहाँ अपना कौन-सा स्टीमर आया है, उसकी जाँच करके आ।''

नौकर गया एवं रात्रि को लौटा। उसने सेठ से कहा :

''सेठजी ! अपना एक स्टीमर आया है।''

सेठ : ''उसमें क्या आया है ?''

हीरा : ''यह तो मुझे पता नहीं।''

वह पुनः दूसरे दिन गया और सामान का पता करके आया। फिर बोला :

''बादाम और काली मिर्च आयी है।''

सेठ : ''और क्या माल आया है ?''

वह फिर पूछने गया एवं आकर बोला :

''लौंग भी आयी है।''

सेठ : ''यह किसने बताया ?''

हीरा : ''एक आदमी ने कहा कि लौंग भी आयी है।''

सेठ : ''अच्छा, वह आदमी कौन था ? जंवाबदार मुख्य आदमी था कि साधारण ?''

हीरा : ''यह तो पता नहीं है।''

सेठ : ''जाओ, जाकर मुख्य आदमी से पूछो कि कौन-कौन-सी चीज आयी है और कितनी-कितनी आयी है ?''

हीरा फिर गया और सामान एवं उसकी मात्रा लिखकर लाया।

सेठ : ''ये चीजें किस भाव में आई हैं और इस समय बाजार में क्या भाव चल रहा है, यह पूछा तूने ?''

हीरा : ''यह तो मैंने नहीं पूछा।''

सेठ : ''अरे मूर्ख ! ऐसा करते-करते तो महीना बीत जायेगा।''

फिर सेठ ने मुनीम को बुलाया और कहा :

''घोघा बंदरगाह जाकर आओ।''

मुनीम दो घण्टे के बाद आया और बोला :

''सेठजी ! इतने मन बादाम है, इतने मन काली मिर्च है, इतने मन लौंग है और इतने-इतने मन फलानी चीजें हैं। सेठजी ! हमारा स्टीमर जल्दी आ गया है। दूसरे स्टीमर एक-दो दिन बाद आयेंगे तो बाजार-भाव में मंदी हो जायेगी। अभी बाजार में माल की कमी है। अतः अभी हम अपना माल खींचकर चुपके से बेच देंगे तो लाभ होगा। यहाँ आने-जाने में देर हो जाती, अतः मैं आपसे पूछने नहीं आया और माल बेच दिया। अच्छे पैसे मिले हैं और यह रहा दो लाख का चेक।''

सेठ ने नौकर से कहा : ''देख लिया फर्क ? अगर तू केवल चक्कर काटता रहता और दो-चार दिन विलंब हो जाता तो मुझे पाँच लाख का घाटा पड़ता। यह मुनीम पाँच लाख के घाटे को रोककर दो लाख का नफा करके आया है। इसको मैं ५००० रूपये देता हूँ तो भी सस्ता है और तुझको ५०० रूपये देता हूँ फिर भी महँगा है। मूर्ख ! तुझमें जिज्ञासा नहीं है।''

बिना जिज्ञासा का मनुष्य आलसी-प्रमादी हो जाता है, तुच्छ रह जाता है जबकि जिज्ञासु मनुष्य हर कार्य में तत्पर एवं कर्मठ होता है। जिसके अंदर जिज्ञासा है वह छोटी-छोटी बातों में भी बड़े रहस्य खोज लेगा और जिसके जीवन में जिज्ञासा नहीं है वह रहस्य को देखते हुए भी अनदेखा कर देगा। जिज्ञासु की दृष्टि पैनी होती है, सूक्ष्म होती है। वह हर घटना को बारीकी से देखता है, खोजता है और खोजते-खोजते रहस्य को भी प्राप्त कर लेता है।

बिना जिज्ञासा का मनुष्य आलसी-प्रमादी हो जाता है, तुच्छ रह जाता है जबकि जिज्ञासु मनुष्य हर कार्य में तत्पर एवं कर्मठ होता है। जिसके अंदर जिज्ञासा है वह छोटी-छोटी बातों में भी बड़े रहस्य खोज लेगा और जिसके जीवन में जिज्ञासा नहीं है वह रहस्य को देखते हुए भी अनदेखा कर देगा। जिज्ञासु की दृष्टि पैनी होती है, सूक्ष्म होती है। वह हर घटना को बारीकी से देखता है, खोजता है और खोजते-खोजते रहस्य को भी प्राप्त कर लेता है।

किसी कक्षा में पचास विद्यार्थी पढ़ते हैं जिसमें शिक्षक तो सबके एक ही होते हैं, पाठ्यपुस्तकें भी एक ही होती हैं किन्तु जो बच्चे शिक्षकों की बातें ध्यान से सुनते हैं एवं जिज्ञासा करके प्रश्न पूछते हैं वे ही विद्यार्थी माता-पिता एवं स्कूल का नाम रोशन कर पाते हैं और जो विद्यार्थी पढ़ते समय ध्यान नहीं देते, सुना-अनसुना कर देते हैं वे थोड़े-से अंक लेकर अपने जीवन की गाड़ी बोझीली बनाकर घसीटते रहते हैं एवं बड़े होकर फिर किस कोने में मर जाते हैं, पता ही नहीं चलता। अतः जिज्ञासु बनो।

जब शिक्षक पढ़ाते हों उस समय ध्यान देकर पढ़ो। यदि समझ में न आये तो अपने-आप उसको समझने की कोशिश करो। अपने-आप उत्तर न मिले तो साथी से या शिक्षक से पूछ लो। ऐसा करके अपनी जिज्ञासा को बढ़ाओ। जिसके पास जिज्ञासा नहीं है उसको तो ब्रह्माजी उपदेश

करें तो भी क्या होगा ? जो व्यक्ति जितने अंश में जिज्ञासु होगा, तत्पर होगा वह उतने ही अंश में सफल होगा।

अगर जिज्ञासा नहीं होगी, तत्परता नहीं होगी तो पढ़ाई में पीछे रह जाओगे, बुद्धि में पीछे रह जाओगे और मुक्ति में भी पीछे रह जाओगे। तुम पीछे क्यों रहो ? जिज्ञासु बनो, तत्पर बनो। सफलता तुम्हारा ही इंतजार कर रही है। ऐहिक जगत के जिज्ञासु होते-होते 'मैं कोन हूँ ? शरीर मरने के बाद भी मैं रहता हूँ... मैं आत्मा हूँ तो आत्मा और परमात्मा में क्या भेद है ? ब्रह्म-परमात्मा की प्राप्ति कैसे हो ? जिसको जानने से सब जाना जाता है, जिसको पाने से सब पाया जाता है वह तत्त्व क्या है ?' ऐसी जिज्ञासा करो। इस प्रकार की ब्रह्मजिज्ञासा करके ब्रह्मज्ञानी जीवन्मुक्त होने की क्षमताएँ तुममें भरी हुई हैं। शाबाश वीर ! शाबाश !

संविधान-सभा में
श्री अनंतशयनम अयंगार के व्यक्त विचार

''यह बड़ा दुर्भाग्यपूर्ण है कि मजहब का उपयोग किसीकी आत्मा को बचाने के लिए नहीं बल्कि समाज को तोड़ने के लिए किया जा रहा है... इसलिए मैं चाहता हूँ कि भारतीय संविधान में एक मूल अधिकार जोड़ा जाए जिसमें धर्मान्तरण पर रोक की व्यवस्था हो। मैं सभी को अपील करता हूँ कि धर्मान्तरण के भयंकर परिणाम को महसूस करें। बाद में जाकर यह समस्या विकराल रूप धारण कर लेगी।''

[श्री अयंगार बाद में बिहार के राज्यपाल व लोकसभा के अध्यक्ष भी रहे।]

- *पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू*

भगवान को भी मँगता कर दिया !

एक होती है आवश्यकता और दूसरी होती है इच्छा।

प्रकृति जबसे हमें जन्म देती है तबसे हमारी आवश्यकता पूरी करना उसकी जिम्मेदारी हो जाती है। यही कारण है कि बालक के जन्म से पूर्व ही माँ के स्तनों में दूध आ जाता है। पशुओं को अपनी प्रकृति के अनुसार आहार आसानी से मिल जाता है। पक्षी को भी दाना चुगने के लिए आसानी से मिल जाता है। जो मादा जीव अपने बच्चों को दूध नहीं पिला सकते ऐसे जीवों जैसे कछुए एवं मछली के नेत्रों में प्रकृति ने ऐसी शक्ति दे रखी है कि उनके बच्चों का पोषण केवल माँ के नेत्रों द्वारा ही हो जाता है। जब एक कछुआ या मछली दूसरे किनारे पर रहकर भी अपने बच्चों का पोषण कर सकती है तो क्या परमात्मा हमारे दिल में रहकर हमारी आवश्यकताएँ पूरी नहीं कर सकता ?

जैसे परमात्मा हमारे दिल में रहकर हमारे शरीर की आवश्यकताएँ पूरी करते हैं, ऐसे ही सद्गुरु भी अपने शिष्यों के हृदय में बैठकर उन्हें किस मार्ग पर, किस ढंग से यात्रा करनी चाहिए- इसकी प्रेरणा देते हैं। लेकिन वे शिष्य सद्गुरु की,

परमात्मा की सुनते कहाँ हैं ?

एक महिला ने किसी प्रसिद्ध मंदिर के पुजारी से कहा :

''पुजारीजी ! भगवान की सेवा-पूजा के लिए किसी चीज की आवश्यकता हो तो कहिएगा । मुझे सेवा का लाभ दीजिएगा ।''

पुजारी सोचने लगा । फिर बोला : ''भगवान के शृंगार के लिए और सब सामान तो है लेकिन सोने की चेनवाली टिटोनी घड़ी नहीं है ।''

उस महिला के पास कुल दो - तीनसौ रूपये ही थे । थोड़े और पैसे इकट्ठे करके उसने सोने के पट्टेवाली टिटोनी घड़ी बनवाकर पुजारी को अर्पित की । पुजारी ने वह घड़ी भगवान को पहना दी । यह देखकर वह महिला बड़ी खुश हुई ।

दो-तीन दिन तक तो वह घड़ी प्रभु के हाथ में रही । चौथे दिन देखा तो वही घड़ी पुजारी के हाथ में ! महिला ने पुजारी से उस घड़ी के विषय में पूछा तो पुजारी ने कहा :

''अब प्रभु ने वह घड़ी मुझे दे दी है ।''

पुजारी की भोजन, वस्त्र, मकान आदि की आवश्यकता तो पूरी हो रही थी लेकिन इच्छा के कारण भगवान को भी भीख मँगता कर दिया कि 'टिटोनी घड़ी चाहिए...' इच्छाओं ने ही मानव को परेशान कर दिया है, दुःखी कर दिया है । सुख तो इच्छा-निवृत्ति में ही निहित है ।

जब एक कछुआ या मछली दूसरे किनारे पर रहकर भी अपने बच्चों का पोषण कर सकती है तो क्या परमात्मा हमारे दिल में रहकर हमारी आवश्यकताएँ पूरी नहीं कर सकता ?

इच्छाओं ने ही मानव को परेशान कर दिया है, दुःखी कर दिया है । सुख तो इच्छा-निवृत्ति में ही निहित है ।

*

कल्पनाओं का जगत

एक था लोभी सेठ । उसने बड़ी मुश्किल से एक सुंदर सपना देखा : 'आहा ! स्वर्ग में गंधर्व गान कर रहे हैं... अप्सराएँ नृत्य कर रही हैं...' दृश्य बड़ा ही सुन्दर था । तभी उस दृश्य में एक भिखारी आ गया एवं बोला : ''सेठजी ! एक पैसा दे दो ।''

वह लोभी सेठ सोचने लगा : 'यह भिखारी बीच में कहाँ से टपक पड़ा ? एक पैसा तो कभी मेरे बाप ने भी नहीं दिया । यदि इससे झकझक करूँगा तो यह और मेरे पीछे पड़ेगा । इतना सुंदर सुहावना दृश्य ! और यह टपक पड़ा बीच में । क्या करूँ ?'

उसने स्वप्न में ही अपनी कुछ क्षणें बितायीं निर्णय करने में कि : 'इस भिखारी को एक पैसा देना पड़ेगा, नहीं तो एक पैसे के कारण स्वर्गीय नृत्य-गान के सुख से मुझे वंचित होना पड़ेगा । मृत्युलोक में लाखों रूपयों के खर्च करने पर भी ऐसे नृत्य-गान का आयोजन नहीं हो सकता । यदि एक पैसा दे देने से जान छूट जाती है तो इसे एक पैसा देकर भी यह मनमोहक कार्यक्रम देखना ही चाहिए ।'

उसनें बड़ी मुश्किल से अपनी जेब में हाथ डाला और स्वप्न में ही बड़बड़ाया : ''आखिर तू मानेगा नहीं ? मेरे रंग में भंग डालता है... ले एक पैसा और जा यहाँ से ।''

इतने में उसकी पत्नी ने यह बड़बड़ाहट सुनकर उसे यह कहते हुए जगा दिया कि : ''यह क्या बोल रहे हैं ?'' लोभी सेठ बड़े सोच-विचार में पड़ गया । फिर बोला :

''धन्यवाद ! तूने मेरा जीवन बचा लिया ।''

पत्नी : ''क्यों ? क्या हुआ ?''

लोभी सेठ : ''अगर तू नहीं जगाती तो मेरा एक पैसा चला जाता ।''

पत्नी : ''एक पैसा जाता भी तो जाग्रत का तो जाता नहीं। स्वप्न की घटना थी अतः सपने का ही पैसा जाता।''

लोभी सेठ : ''पैसा तो सपने का होता लेकिन मेरी साख गिर जाती कि 'ऐसा लोभी होने पर भी सपने में एक पैसा दान कर दिया !' इस बात का महत्त्व घट जाता और सपने में दान करने का कलंक लग जाता।''

कहने का तात्पर्य यह है कि हर इन्सान का अपना-अपना जगत है, अपनी-अपनी कल्पना है। जैसे सपने की वस्तु को साथ में लेकर आप जाग नहीं सकते, ऐसे ही द्वैत के विचारों को सच मानकर आप आत्म-साक्षात्कार नहीं कर सकते।

अतः इस परिवर्तनशील और मिथ्या जगत को, स्वप्नतुल्य संसार को सत्य न मानो। जो बीत गया वह सपना है, जो बीत रहा है वह सपना है। परमात्मा अपना है।

*

प्रारब्ध दो कदम आगे !

एक विनोदी कथा है :

एक किसान के खेत में चौलाई की अच्छी पैदावार होती थी। उसके घर रोज चौलाई की ही सब्जी बनती थी। एक दिन उसने सोचा : 'चौलाई खा-खाकर ऊब गया हूँ। यदि थोड़ा व्यवस्थित भोजन मिले तो कितना अच्छा हो !' उसके गाँव से ५ कोस की दूरी पर उसकी बहन का गाँव था। उसने सोचा कि बहन के घर जाऊँगा तो जरूर कुछ-न-कुछ अच्छा खाने को मिलेगा।

भाई चलकर बहन के घर पहुँचा। बहन ने सोचा : 'भाई को कुछ अच्छा-अच्छा खिलाना चाहिए। अभी-अभी खेत से ताजी चौलाई आयी है। इसका शाक मेरे भाई को अच्छा लगेगा। वही बना दूँ।' बहन ने चौलाई की सब्जी बना दी।

चिंता करना ही हो तो इस बात की करें कि : 'आयुष्य क्षीण होता जा रहा है... अभी तक आत्मबोध नहीं हुआ। अभी तक सुख-दुःख में सम रहने की क्षमता नहीं आयी। मेरे ऐसे दिन कब आवेंगे कि गीता का समत्वयोग मुझमें प्रगट होगा ?'

जब भोजन का वक्त हुआ तो भाई ने सोचा : 'चलो, आज तो अच्छा भोजन मिलेगा।' लेकिन जैसे ही उसे भोजन परोसा गया, वह खूब हँसा और बोला :

''अरे ! तुम मेरे से पहले यहाँ पहुँच गयी !''

बहन : ''क्या हुआ ?''

भाई : ''बहन ! रोज चौलाई खा-खाकर ऊब गया था। आज जानबूझकर तेरे घर आया था कि कुछ अलग चीज खाने को मिलेगी। लेकिन भाग्य ही कुछ ऐसा है इसीलिए यह मेरे आगे-आगे पहुँच जाता है।''

बहन समझदार थी। वह बोली : ''इसीलिए तो कहते हैं मेरे भाई ! कि भाग्य दो कदम आगे होता है।''

खान-पान, मान-अपमान आदि में भाग्य दो कदम आगे चलता ही है। अतः उसके लिए ज्यादा चिंता करने की जरूरत नहीं है। चिंता करना ही हो तो इस बात की करें कि : 'आयुष्य क्षीण होता जा रहा है... उम्र पल-पल घटती जा रही है... अभी तक आत्मबोध नहीं हुआ। अभी तक सुख-दुःख में सम रहने की क्षमता नहीं आयी। अभी तक मान-अपमान को खिलवाड़ समझने का ज्ञान प्रगट नहीं हुआ। मेरे ऐसे दिन कब आवेंगे कि गीता का समत्वयोग मुझमें प्रगट होगा ?'

*

निंदा से कोढ़ नाश !

- पूज्यपाद संत श्री आसारामजी बापू

मृत्यु के भय से तो मृत्यु बढ़िया है और बदनामी के भय से बदनामी अच्छी है। 'बद' होना बुरा है किन्तु 'बदनाम' होना बुरा नहीं है।

इक्ष्वाकु कुल के राजा को कोढ़ की बीमारी हो गयी। दिन का चैन और रात की नींद हराम हो गयी। सारे हकीम और वैद्य अपना-अपना इलाज आजमाकर थक चुके थे। आखिर वह राजा गुरु वशिष्ठजी के श्रीचरणों में पहुँचा और बोला :

''गुरुदेव ! आज आपके निकट मैं स्वार्थ की बात लेकर आया हूँ। प्रभु ! शांति के लिए नहीं, वरन् शरीर का रोग मिटाने के लिए आया हूँ। इस कोढ़ के इलाज में कोई भी औषधि काम नहीं कर रही है। इसने मुझे धन-वैभव एवं सारी सुविधाओं के बीच रहते हुए भी अत्यंत दुःखी कर दिया है। गुरुदेव ! इसका क्या कारण है ?''

कुछ लोग विवेक से संसार-वैभव का आकर्षण छोड़कर संतों की शरण में पहुँच जाते हैं तो कुछ लोगों को सुकृत के बल से उस सुख-वैभव में विक्षेप डालकर उसकी नश्वरता का बोध करवाकर संतों की शरण में पहुँचा देती है प्रकृति।

अपने सिद्धांतों के लिये अपने प्राण न्योछावर करने की अपेक्षा जीवित रहकर अपने सिद्धातों के विरोधियों से टक्कर लेना श्रेष्ठ है।

वशिष्ठजी महाराज ने तनिक अपने स्वस्वरूप में गोता लगाया और समझ गये कि इसके पूर्वकाल का दुष्कृत्य अभी फल देने के लिए तत्पर हुआ है।

कभी पूर्वकाल का सुकृत फल देने को तत्पर होता है। पूर्वकाल का सात्त्विक सुकृत जब फल देने को तत्पर होता है तब संतों के यहाँ जाने की रुचि होती है। राजस सुकृत फल देता है तो भोग-वैभव मिलता है और तामस सुकृत फल देता है तो ऐशो-आराम की ओर, शराब-कबाब की ओर ले जाता है।

जरूरी नहीं है कि पाप का फल ही दुःख होता है। कभी-कभी पुण्य का फल भी दुःख होता है। पुण्य का फल दुःख ? हाँ... कुछ ऐसे पुण्य किये हैं कि जिसका फल दुःख हो रहा है। दुःख क्यों हो रहा है ? क्योंकि आपकी समय-शक्ति संसार के इन खिलौनों में बरबाद न हो जाए। अतः प्रकृति इन खिलौनों की, सांसारिक विषयरूपी खिलौनों की प्राप्ति में विक्षेप डालकर आपको संत और परमात्मा की शरण पहुँचाना चाहती है, इसीलिये दुःख देती है।

कुछ लोग विवेक से संसार-वैभव का आकर्षण छोड़कर संतों की शरण में पहुँच जाते हैं तो कुछ लोगों को सुकृत के बल से उस सुख-वैभव में विक्षेप डालकर उसकी नश्वरता का बोध करवाकर संतों की शरण में पहुँचा देती है प्रकृति।

वशिष्ठजी महाराज बोले :

''हे राजन् ! तुम्हारा पूर्वकृत दुष्कृत्य ही अभी कोढ़

के रूप में प्रगट हुआ है।''

राजा : ''गुरुदेव ! मैं कुछ समझ नहीं पा रहा हूँ।''

तब वशिष्ठजी ने कहा :

''ठीक है, मैं तुम्हें दिखा देता हूँ।''

वशिष्ठजी ने राजा की आँखों पर संकल्प करके हाथ रख दिया, फिर पूछा : ''राजन् ! क्या दिख रहा है ?''

राजा : ''गुरुजी ! दो पहाड़ दिख रहे हैं। उनमें से एक पहाड़ तो सुवर्णकाय है और दूसरा काला-कलूट एवं गंदगी के ढेर जैसा दिख रहा है।''

पूर्वकाल का सात्त्विक सुकृत जब फल देने को तत्पर होता है तब संतों के यहाँ जाने की रुचि होती है। राजस सुकृत फल देता है तो भोग-वैभव मिलता है और तामस सुकृत फल देता है तो ऐशो-आराम की ओर, शराब-कबाब की ओर ले जाता है।

वशिष्ठजी : ''राजन् ! ठीक दिख रहा है। पहला जो चमक रहा है, वह तुम्हारे शुभ सुकृत हैं और दूसरा जो दिख रहा है गंदगी के ढेर जैसा, वह तुम्हारा पाप है। राज्य और यश तुम्हारे सुकृत का फल है लेकिन अनिद्रा और कोढ़ की बीमारी ये तुम्हारे पूर्वजन्मों के दुष्कृत्यों के फल हैं।''

राजा : ''गुरुदेव ! इसका उपाय क्या है ?''

वशिष्ठजी : ''इस गंदगी के ढेर को तुम खा सकते हो क्या ?''

राजा : ''गुरुदेव ! यह तो संभव नहीं है।''

वशिष्ठजी : ''तो जब तक यह ढेर रहेगा, तब तक तुम्हारा यह दुःख भी बना रहेगा।''

राजा : ''इस ढेर को खत्म करने का कोई दूसरा उपाय बताइए, गुरुदेव !''

वशिष्ठजी : ''तुम ऐसा करो कि अपनी भाभी के महल के प्रांगण में अपना खाट बिछवाओ और रोज शाम को ऐसे ढंग से वहाँ जाकर रहो ताकि लोगों के मन में ऐसा हो कि 'भाभी के साथ राजा का नाजायज संबंध है।' लोगों को तुम दोनों का रिश्ता गलत प्रतीत हो। तुम गलत नहीं हो और गलती करोगे भी नहीं किन्तु लोगों को 'तुम गलत हो' ऐसी प्रतीति कराओ।''

राजा : ''गुरुदेव ! मेरी भाभी ! वे तो माँ के समान हैं !! मैं वहाँ इस ढंग से जाकर बिस्तर लगाऊँ कि लोग मुझे गलत समझें !! गुरुदेव ! इससे तो मरना श्रेष्ठ है।''

वशिष्ठजी : ''बेटा ! बद होना बुरा है किन्तु बदनाम होना बुरा नहीं है। तुम्हारे इस दुष्कृत्य को नष्ट करने का सबसे सुगम उपाय मुझे यही लगता है।''

आखिर हाँ-ना करते-करते राजा सहमत हुआ और उसने गुरुआज्ञा को शिरोधार्य किया।

सैनिक को जब अपने सेनापति का कोई आदेश मिलता है तो अपनी जान की परवाह किये बिना ही वह उस आदेश का पालन करता है। जो चार पैसे कमाता है, वह सैनिक भी आदेश मानकर अपनी जान दे देता है तो जिसको परमात्मतत्त्व पाना है, वह अपने गुरु का आदेश मानकर उन्हें अपना अहं दे दे तो इसमें उसका घाटा क्या है ?

जो चार पैसे कमाता है, वह सैनिक भी आदेश मानकर अपनी जान दे देता है तो जिसको परमात्मतत्त्व पाना है, वह अपने गुरु का आदेश मानकर उन्हें अपना अहं दे दे तो इसमें उसका घाटा क्या है ?

तू मुझे तेरा उर-आँगन दे दे,
मैं अमृत की वर्षा कर दूँ।
तू मुझे तेरा अहं दे दे,
मैं परमात्मा का रस भर दूँ॥

राजा को तीन दिन हो गये अपनी भाभी के

प्रांगण में बिस्तर बिछाये हुए। उसका तीन हिस्सा कोढ़ गायब हो गया और एक-दो घण्टे की नींद भी आने लगी। राजा प्रसन्न होकर पहुँचा अपने गुरुदेव के श्रीचरणों में एवं प्रणाम करता हुआ बोला :

''गुरुदेव ! बिना औषधि के ही तीन हिस्सा कोढ़ गायब हो गया ! थोड़ी-थोड़ी नींद भी आने लगी है।''

गुरुदेव ने पुनः संकल्प करके राजा की आँखों पर हाथ रखा तो राजा क्या देखता है कि गंदगी का ढेर जो काला पहाड़ था वह तीन हिस्सा गायब हो चुका है।

फिर गुरुदेव बोले : ''चार दिन और यही प्रयोग करो।''

राजा ने चार दिन पुनः वही प्रयोग किया तो पूरा कोढ़ मिट गया, केवल एक नन्हीं-सी फुँसी बच गयी। तब राजा ने कहा :

''गुरुदेव ! पूरा कोढ़ मिट गया है और अब तो नींद भी बढ़िया आती है लेकिन एक छोटी-सी फुँसी बच गयी है और इसमें जरा-सी खुजलाहट होती रहती है।''

तब गुरुदेव ने कहा : ''राजन् ! अगर मैं भी थोड़ी निंदा कर दूँ तो यह मिट जायेगी। लेकिन मैं जानता हूँ कि तुम निर्दोष हो। अतः निंदा करके मैं अपने सिर पर पाप क्यों चढ़ाऊँ ? इसे अब तुम ही भोग लो।''

निर्दोष व्यक्ति की जब बदनामी होती है तब भगत लोग, सीधे-सादे लोग घबरा जाते हैं :

'बापू ! हमने किसीका कुछ नहीं बिगाड़ा फिर भी पड़ोसी लोग हमारे साथ ऐसा-ऐसा दुर्व्यवहार करते हैं...'

अरे भाई ! तुम्हारे चेहरे पर खुशी या प्रसन्नता देखकर कोई ऐसा-वैसा सोचता या बदनामी करता है तो तुम घबराओ मत। ऐसे अवसर पर इक्ष्वाकु कुल के राजा की इस कथा को याद कर लिया करो। कभी-कभी तुम्हारा धन-वैभव एवं यश देखकर अथवा किसी संत-महापुरुष का तुम पर प्रेम है - यह देखकर कोई जलता है। तुम तो उसे जलाने का प्रयत्न नहीं करते हो, अतः इसमें तुम्हारा दोष नहीं है।

जब बिजली चमकती है तब बिजली का कोई इरादा नहीं होता कि हम गधी को परेशान करें। बिजली को तो पता तक नहीं होता कि गधी परेशान हो रही है लेकिन जब बिजली चमकती है तो गधी दुलत्ती मारती है। हालाँकि बिजली को वह दुलत्ती लगती भी नहीं है। इसी प्रकार जब तुम्हारे जीवन में चमक आये और किसीकी बुद्धि दुलत्ती मारने लगे अर्थात् निंदा करने लगे तो तुम चिंता क्यों करते हो ? तुम तो टिके रहो अपनी गरिमा में, अपनी महिमा में।

स्वामी रामतीर्थ कहते थे : ''अपने सिद्धांतों के लिये अपने प्राण न्योछावर करने की अपेक्षा जीवित रहकर अपने सिद्धांतों के विरोधियों से टक्कर लेना श्रेष्ठ है।''

एकांत में बैठकर समाधि करने से जो फायदा होता है, वही फायदा, वही आनंद और वही सामर्थ्य, संसार में ईश्वर को साक्षी रखकर दैवी कार्य करते-करते व्यक्ति पा सकता है। योगी को गिरि-गुफा में बैठकर निर्विकल्प समाधि से, ध्यान करने से जो उपलब्धियाँ होती हैं वे ही उपलब्धियाँ उन्हें भी मिल जाती हैं जो संसार में सुख बाँटने की दृष्टि से काम करते हैं और कभी-कभार संतों के चरणों में बैठकर अपनी बुद्धि को बुद्धिदाता का ज्ञान पाने में लगा देते हैं।

*

सौदा सस्ता है

एक सेठ अपने रिश्तेदार के साथ अपनी दुकान पर जा रहे थे। घर पर उन रिश्तेदार की खातिरदारी में दो-चार घण्टे लग गये थे। प्रतिदिन तो दस बजे दुकान जाने के लिए वे निकल जाते

थे किन्तु आज दो बज गये थे।

वे दोनों दुकान पर पहुँचे तो एक हल्के नौक़र ने सेठ का घोर अपमान कर दिया : ''कितनी देर से दुकान पर आये ? तुम्हारे बाप का राज है ? कुछ परिश्रम नहीं करते ? धंधा चौपट करना है क्या ?''

यह देखकर सेठ के सम्बन्धी को बड़ा आश्चर्य हुआ ! उन्होंने पूछा :

''यह नौकर आपको इतनी बुरी तरह डाँट रहा है और आप मुस्कुरा रहे हो ?''

सेठ ने कहा : ''मैंने इसे रखा ही इसीलिए है। यह ठीक ही कह रहा है।''

सम्बन्धी : ''अच्छा ! इसको तनख्वाह कितनी देते हो ?''

सेठ : ''५०० रूपये तो इसकी तनख्वाह है और मुझे डाँटने के लिए उसे ६०० रूपये और देता हूँ। इस प्रकार मैं इसे कुल ११०० रूपये देता हूँ। सस्ताई का जमाना है। मुझे और सब तो केवल 'वाह-वाह' करनेवाले ही मिलते हैं, डाँटनेवाला कोई नहीं मिलता, मेरे अवगुण दिखानेवाला कोई नहीं मिलता। यदि जीते-जी मैंने अपने को ठीक नहीं किया तो मरने के बाद न जाने कितने ही जन्मों में मुझे ठीक करनेवाली माताएँ मिलेंगी, कितने ही पिता मिलेंगे, कितने ही चाबुक लगानेवाले मिलेंगे। ८४ लाख जन्मों की अपेक्षा इसी जन्म में कोई चाबुक लगाता है तो ११०० रूपये देना कोई बड़ी बात नहीं है। सौदा फिर भी सस्ता है।''

सेवाधारियों एवं सदस्यों के लिए विशेष सूचना

(१) कृपया अपना सदस्यता शुल्क या अन्य किसी भी प्रकार की नगद राशि रजिस्टर्ड या साधारण डाक द्वारा न भेजा करें। इस माध्यम से कोई भी राशि गुम होने पर आश्रम की जिम्मेदारी नहीं रहेगी। अतः अपनी राशि मनीआर्डर या ड्राफ्ट द्वारा ही भेजने की कृपा करें।

(२) 'ऋषि प्रसाद' के नये सदस्यों को सूचित किया जाता है कि आपकी सदस्यता की शुरूआत पत्रिका की उपलब्धता के अनुसार कार्यालय द्वारा निर्धारित की जाएगी।

''यदि आप एक गाँव के कुछ हरिजनों में से १० हरिजनों को ईसाई बना लें और उनके लिए एक गिरजाघर बना दें तो उस हालत में आप बाप को बेटे का और बेटे को बाप का विरोधी बना देंगे और अपने इस कार्य के समर्थन में आप 'बाइबिल' में से कुछ वचन भी ढूँढ़ निकालेंगे, पर वह तो ईसाई मत का एक 'व्यंग्य-चित्र' होगा।''

- महात्मा गाँधी

[गाँधी वाङ्मय, खण्ड ६४, पृ.११२]

गौमाता : दुःख-दारिद्र्यहारिणी

[गतांक का शेष]

गौमाता के गोबर में लक्ष्मी का निवास माना गया है। यह बात हमारे वेद-पुराण तथा ऋषि-मुनि सभी कहते हैं।

गाय का गोबर हमारे लिए बहुत उपयोगी है। गोबर का सही उपयोग कंडे व गैस के रूप में देश के ऊर्जा-संकट को दूर कर सकता है तथा प्रदूषण से मुक्ति दिला सकता है। यह कम्पोस्ट खाद के रूप में धरती को पर्याप्त उपजाऊँ बनाता है। धरती की उर्वरा-शक्ति गौमाता ने ही बना रखी है। कैलिफोर्निया (अमेरिका) में गाय के गोबर पर २ करोड़ डॉलर खर्च करके प्रतिवर्ष ८ करोड़ डॉलर की आमदनी की जा रही है। अतः आवश्यकता है इसमें छिपे रहस्यों को ढूँढ़ने तथा उन्हें उपयोग में लाने की।

इसी तरह गोदुग्ध, गोमूत्र, घी, मट्ठा आदि के गुणों को भी और ज्यादा उजागर करने की आवश्यकता है। इन विषयों पर शोधकार्य अभी बहुत सीमित है।

भारत के कृषि-कर्मों का ५० प्रतिशत भार बैलों के कंधों पर टिका है। किसानों के उत्पादों की ढुलाई बैलों से होती है। हमारे देश में दुग्ध उत्पादन का ४८ प्रतिशत भाग गाय से आता है। ग्रामीण अंचलों में ७५-८० प्रतिशत ईंधन गोवंश से आता है। भारत में लगभग १० करोड़ परिवारों का पालन-पोषण गोवंश करता है। इतने विशाल जनसमूह को रोजगार देनेवाला तथा पालन-पोषण करनेवाला कोई दूसरा उद्योग नहीं है। अतः यहाँ यह कहना उचित ही होगा कि गोवंश से एक परिवार की ही नहीं, पूरे देश की दरिद्रता दूर हो सकती है।

यद्यपि सभी मनुष्य लक्ष्मीदेवी की पूजा में अधिक विश्वास करते हैं परंतु लक्ष्मी की जगह यदि गौमाता की पूजा की जाय तो अन्य लाभों के साथ-साथ लक्ष्मी तो स्वयं ही मिल जाती हैं। जिस प्रकार एक भक्त मात्र फूल-पत्तों से लक्ष्मी को प्रसन्न करके धन, ऐश्वर्य तथा खुशियाँ प्राप्त करता है, उसी प्रकार गोपालक गौमाता को घास-पत्ती, भूसा आदि अर्पण करके उनसे दूध, दही, घी, मट्ठा जैसे खाद्य पदार्थों के साथ ही सुख-संपदा तथा ऐश्वर्य भी प्राप्त करता है।

लक्ष्मी माता के प्रसन्न होने पर धन-संपदा ही मिलती है, जबकि गौमाता प्रसन्न होने पर गोपालक को दूध, ईंधन, खाद तथा औषधियों के अतिरिक्त धन-संपदा प्रदान करती है। गौमाता की सेवा से लक्ष्मीसहित ३३ करोड़ देवताओं की सेवा हो जाती है। वह धन-वैभव के साथ-साथ बल-बुद्धि तथा ओज को भी बढ़ाती है। लक्ष्मी चंचला हैं तथा अधिक समय तक एक जगह रुकती नहीं हैं। उनके रुष्ट होने पर मनुष्य को दरिद्रता का शिकार होना पड़ता है परंतु गौमाता एक अजस्र स्रोत के रूप में मानवसेवा में लगी रहती है और उसके रहते मनुष्य को कभी भी दरिद्रता, अकाल मृत्यु तथा अपयश का मुख नहीं देखना पड़ता। **(क्रमशः)**

मौत के मुख से वापसी

परम पूज्य सद्गुरुदेव से मेरा पूरा परिवार दीक्षित है। १५ अप्रैल, १९९४ की घटना है :

मेरी माँ तीसरी मंजिल से उतरकर कपड़े धोने के लिए नीचे गई। उसके शरीर में एकाएक कम्पन होने लगा और आँखों के आगे अँधेरा छाने लगा। फिर उसी हालत में न जाने कैसे तीसरी मंजिल की बाल्कनी में आई और वहीं पर धड़ाम से गिर पड़ी। उसके गिरने की आवाज सुनकर हम सभी वहाँ पहुँचे तो देखा कि उसका मुँह टेढ़ा होता जा रहा है। कुछ क्षण बाद वह बेहोश हो गयी। उसे अस्पताल में भर्ती कराया गया। डॉक्टरों ने कहा कि सिर की नस फट गई है और दायें सिर से लेकर दायें पाँव की एड़ी तक लकवा (पैरालीसिस) मार गया है। इनका बच पाना मुश्किल है। तीन दिन तक हम कुछ नहीं कह सकते।

''बड़ बादशाह की परिक्रमा करो, वहाँ का जल पिलाओ, श्रीगुरुगीता का पाठ करके पानी में निहारते हुए स्वास्थ्य मंत्र का जप करो और उस पानी को पिला दो। सब ठीक हो जायेगा।''

घटना के दूसरे दिन मैं और मेरी बहन दोनों पूज्य बापू के आश्रम में पहुँचे। पूज्यश्री उस समय वहाँ नहीं थे तो मेरी बहन ने पूज्य माताजी को पूरी घटना बतायी। पूज्य माताजी ने कहा :

''बड़ बादशाह की परिक्रमा करो, वहाँ का जल पिलाओ, श्रीगुरुगीता का पाठ करके पानी में निहारते हुए स्वास्थ्य मंत्र का जप करो और उस पानी को पिला दो। सब ठीक हो जायेगा।''

...और हुआ भी ऐसा ही। मेरी माँ आज भी ठीक ढंग से हँसती, बोलती व चलती है। डॉक्टर लोग यह देखकर दंग रह गये ! यह पूज्य गुरुदेव की करुणा-कृपा का ही फल है।

मेरी माँ ने ठीक होने के बाद बताया :

''जब मेरे सिर में चक्कर आने लगा व आँखों के सामने अँधेरा छाने लगा तो अचानक मुझे पूज्य बापू का स्मरण हो आया और मैं गुरुमंत्र जपने लगी। फिर मैंने देखा कि श्वेत वस्त्रधारी दो दिव्य पुरुष मेरा हाथ पकड़कर तीसरी मंजिल की बाल्कनी तक छोड़ने के लिए ले जा रहे हैं। उसके बाद क्या हुआ, मुझे कुछ पता नहीं। जब मैं अस्पताल में थी तो पूज्य बापू खिड़की में मंद-मंद मुस्कुराते हुए दिखे। फिर गहरी नींद में चली गई तो पूज्यश्री मुझे कभी सत्संग करते दिखते, तो कभी हँसते-मुस्कुराते व झूमते हुए दिखाई देते। डॉक्टरों में भी मुझे पूज्यश्री ही दिखाई देते। पूज्य गुरुदेव की कृपा से मुझे नई जिन्दगी मिली है। धन्य हैं गुरुदेव ! आप धन्य हैं !!''

'सभी शिष्य रक्षा पाते हैं, सूक्ष्म शरीर गुरु आते हैं...' यह बात इस घटना से सिद्ध होती है।

संजय एस शर्मा
(संजय एस. शर्मा)
सी-२६, रम्याकुंज सोसायटी, जलधारा सोसायटी के पास, इसनपुर वटवा रोड, इसनपुर, अमदावाद।

[नोट : इस 'योगयात्रा' स्तंभ के लिए अपने अनुभव भेजते समय कृपया अपना पूरा नाम, पूर्ण पता व पासपोर्ट साइज का फोटो अवश्य भेजें। - संपादक]

यकृत-चिकित्सा

यकृत-चिकित्सा के लिए अन्य कोई भी चिकित्सा-पद्धतियों की अपेक्षा आयुर्वेद श्रेष्ठ पद्धति है। आयुर्वेद में इसके सचोट इलाज हैं। यकृत संबंधी किसी भी रोग की चिकित्सा निष्णात वैद्य की देखरेख में करवानी चाहिए।

कई रोगों में यकृत (Liver) की कार्यक्षमता कम हो जाती है। यकृत की कार्यक्षमता बढ़ाने के लिए आयुर्वैदिक औषधियाँ अत्यन्त उपयोगी हैं। अतः यकृत को प्रभावित करनेवाले किसी भी रोग में रोग की यथायोग्य चिकित्सा के साथ-साथ निम्न बताई हुई आयुर्वैदिक औषधियों का सेवन हितकारी है :

* सुबह खाली पेट एक चुटकी (लगभग १ ग्राम) साबूत चावल पानी के साथ निगल जायें।

* हल्दी, धनिया एवं जवारा का रस २० से ५० मि. ली. की मात्रा में सुबह-शाम पी सकते हैं।

* रोहितक का चूर्ण २ ग्राम एवं बड़ी हरड़ का चूर्ण २ ग्राम सुबह खाली पेट गोमूत्र के साथ लेना चाहिए।

* पुनर्नवामंडूर की २-२ गोलियाँ (करीब एकाध ग्राम) सुबह-शाम गोमूत्र के साथ लेना चाहिए। यह सब संत श्री लीलाशाहजी उपचार केन्द्र (आश्रम) में भी मिल सकेगा।

* संशमनी वटी की दो-दो गोलियाँ सुबह-दोपहर-शाम पानी के साथ लेना चाहिए।

* आरोग्यवर्धिनी वटी नं. १ की १-१ गोली सुबह-शाम पानी के साथ लेना चाहिए।

* हरितकी की ३ गोलियाँ रात्रि में गोमूत्र के साथ लें।

* वज्रासन, पादपश्चिमोत्तानासन, पद्मासन, भुजंगासन जैसे आसन तथा प्राणायाम भी इस रोग में लाभप्रद हैं।

अपथ्य : लीवर के रोगी भारी पदार्थ एवं दही, उड़द की दाल, आलू, भिंडी, मूली, केला, नारियल, बरफ और उससे निर्मित पदार्थ, तली हुई चीजें, मूँगफली, मिठाई, अचार, खटाई इत्यादि न खायें।

पथ्य : शालि चावल, मूँग, चने, परमल (मुरमुरे), जौ, गेहूँ, अँगूर, अनार, परवल, लौकी, तुरई, गाय का दूध, गोमूत्र, धनिया, गन्ना आदि जठराग्नि को ध्यान में रखकर, नपा-तुला ही खाना चाहिए।

*

बच्चों में तुतलेपन एवं शैयामूत्र की समस्या

कुछ बच्चों में तुतलेपन एवं शैयामूत्र की बीमारी पायी जाती है। बचपन में यह क्रिया रोग नहीं मानी जाती किन्तु ४-५ वर्ष के बाद अथवा किशोरावस्था में भी यह क्रिया बच्चों में बनी रहती है तो उसके निदान के लिए माता-पिता को उचित इलाज कराना चाहिए। आगे चलकर इन बीमारियों से बच्चों का विकास अवरुद्ध हो जाता है तथा उनमें एक हीन भावना घर कर लेती है।

तुतलापन एक मानसिक दोष है। प्रायः बच्चों में कोई भी कार्य शीघ्र करने की एवं उतावलेपन की प्रवृत्ति पायी जाती है। कुछ बच्चे अपने से बड़ों के साथ रहकर उन्हीं की तरह जल्दी बोलने का प्रयास करते हैं। इसके परिणामस्वरूप उनमें तुतलापन आ जाता है।

तुतलेपन का इलाज

✲ तेजपात (तमालपत्र) को जीभ के नीचे रखकर रुक-रुककर बोलने से लाभ होता है।

✲ दालचीनी चबाने व चूसने से भी तुतलेपन में लाभ होता है।

✲ दो-चार बदाम प्रतिदिन रात को भिगोकर सुबह छील लो। तत्पश्चात् उन्हें पीसकर दस ग्राम मक्खन में मिला लो। फिर बच्चों को सेवन कराओ। यह उपाय कुछ माह तक निरन्तर अपनाओ तो काफी लाभ होता है।

✲ आरती के बाद जो शंख बजाया जाता है उस शंख में सुबह पानी भर दो। वह पानी शाम को पिलाओ। शाम को पानी भर दो और सुबह पिलाओ। शंखभस्म ५० मि. ग्रा. पानी के साथ दो। यह भस्म आप बना लो अथवा आश्रम के दवाखाने से प्राप्त कर लो।

शैयामूत्र का इलाज

✲ जामुन की गुठली को पीसकर चूर्ण बना लो। इस चूर्ण की एक चम्मच मात्रा पानी के साथ देने से लाभ होता है।

✲ रात को सोते समय प्रतिदिन छुहारे खिलाओ।

✲ २०० ग्राम गुड़ में १०० ग्राम काले तिल एवं ५० ग्राम अजवाइन मिलाकर १०-१० ग्राम की मात्रा में दिन में दो बार चबाकर खाने से लाभ होता है।

✲ रात्रि को सोते समय दो अखरोट की गिरी एवं २० किसमिस १५-२० दिन तक निरन्तर देने से लाभ होता है।

✲ सोने से पूर्व शहद का सेवन करने से लाभ होता है। रात को भोजन के बाद दो चम्मच शहद आधे कप पानी में मिलाकर पिलाना चाहिए। यदि बच्चे की आयु छः वर्ष से कम हो तो शहद एक चम्मच देना चाहिए। इस प्रयोग से मूत्राशय की मूत्र रोकने की शक्ति बढ़ती है।

✲ काले तिल को पीसकर चूर्ण बना लो। एक बड़ा चम्मच चूर्ण खूब चबा-चबाकर खाने के लिए दो तथा ऊपर से दूध पिलाओ। २० से ९० दिनों तक आवश्यकतानुसार इसका सेवन करा सकते हैं। यदि बच्चे छः वर्ष से कम आयु के हों तो तिल की मात्रा २ ग्राम रखो।

- वैद्यराज अमृतभाई
स्वामी श्री लीलाशाहजी उपचार केन्द्र,
जहाँगीरपुरा, सूरत.

✲ **दिल्ली (यमुनापार)** : २८ अप्रैल से २ मई '९९ तक इस ऐतिहासिक भूमि में पाँच दिवसीय पाँचवाँ **'विश्व शांति सत्संग समारोह'** संपन्न हुआ। इसमें प्रथम दो दिन श्री सुरेशानंदजी का प्रवचन हुआ। दूरदर्शन, चेनलों, सोनी टी. वी. तथा अन्य माध्यमों से सैकड़ों नहीं, हजारों नहीं, लाखों नहीं, अब तो करोड़ों-करोड़ों श्रोता जिनकी जीवनोद्धारक और आत्मीयतापूर्ण अमृतवाणी का लाभ लेते हैं ऐसे, जीते-जी मुक्ति का संदेश देनेवाले अलख के औलिया पूज्यपाद बापू का दर्शन करने लोग उमड़ पड़े थे।

पटरियों पर चलनेवाली एक भव्य सुसज्जित ट्राली स्थानीय समिति द्वारा तैयार की गई जिससे पूज्यश्री के निकट से दर्शन करने की लाखों भक्तों की शुभाकांक्षा पूर्ण हो सकी। पूज्यपाद बापू को अपने बीच पाकर अपार जनसमुदाय के आनंद, उत्साह व आह्लाद की सीमा न रही। गगनमंडल जय-जयकार व 'हरि ॐ...' की पावन धुन से गूँज रहा था।

इस घोर कलियुग में भी भगवान के प्यारे, संतों के दुलारे कम नहीं हैं। किसीने ठीक ही कहा है कि ऐसे संतों और उनके दुलारे भक्तों से ही पृथ्वी टिकी है अन्यथा कब की रसातल में चली गई होती।

३० अप्रैल को पूर्णिमा दर्शनोत्सव मनाने के लिए देशभर से आए हुए पूनमदर्शन-व्रतधारियों ने गुरुदेवश्री का दर्शन कर अन्न-जल ग्रहण किया।

विश्व को शांति का संदेश देते हुए प्राणिमात्र के परम हितैषी गुरुदेवश्री ने कहा : **''शांति मानव की गहरी माँग है। इसकी पूर्ति के लिए उसे वहाँ पहुँचना होगा जहाँ वास्तविक सुख और शांति का दरिया लहरा रहा है। वह स्थान है सच्चिदानंदस्वरूप आत्मा।''**

भौतिकवाद से प्रभावित मनुष्य की तमस् से आच्छादित बुद्धि को अशांति का कारण बताते हुए पूज्यपाद बापू ने सारगर्भित सूत्रात्मक वाणी में कहा : ''**तमस् से ढँकी हुई बुद्धि पाप को पुण्य, त्याज्य को ग्राह्य, अधर्म को धर्म बताती है जिससे मनुष्य का जीवन दुष्प्रवृत्तियों में लग जाता है। तामसी बुद्धि से आसुरी प्रवृत्तियों को पोषण मिलता है जिससे सभी विपरीत कर्म होने लगते हैं और सर्वत्र अशांति फैलती है।**

जिस स्थान में निवास करने से तामसिक बुद्धि बढ़ती हो, जिस वातावरण से भोगवासना एवं पापवासना बढ़ती हो, जिन पुस्तकों-पत्रों के पढ़ने से वृत्तियाँ दूषित होती हों, जिस खान-पान से मन में तमोगुण बढ़ता हो, जिस रहन-सहन से भगवान व संतों के प्रति अश्रद्धा उत्पन्न होती हो, जिन वस्त्रों के पहनने से भोगासक्ति उत्पन्न होती हो, जो व्यवहार या आजीविका का साधन चोरी, हिंसा तथा दूसरों का अहित करानेवाला हो, जो कुछ भी देखने-सुनने, वार्तालाप करने से विषयभोगों में रुचि, आसक्ति और भगवान में अरुचि पैदा होती हो, उनका जितना शीघ्र और जितने अंशों में त्याग करेंगे उतना ही शांति व आनंद आपके जीवन का अंग बनता जायेगा।''

गीता में भगवान श्रीकृष्ण द्वारा अर्जुन के प्रति कहे गये अमृतमय वचनों को उद्धृत करते हुए गीता के मर्मज्ञ पूज्यश्री ने कहा : **''जो सारी कामनाओं को छोड़ चुका है, जो निःस्पृह है, जिसकी किसी प्राणी-पदार्थ-परिस्थिति में ममता नहीं है और जो अहंकार से रहित है वह शांति प्राप्त करता है।''**

✲ **हरिद्वार** : सप्तसरोवर रोड व गंगातट पर स्थित आध्यात्मिक स्पंदनों से युक्त संत श्री आसारामजी आश्रम में १० से १६ मई '९९ तक सात दिवसीय शक्तिपात साधना शिविर का आयोजन हुआ जिसमें अंतिम चार दिन विद्यार्थियों के लिए था।

हृदय के अन्तरतम प्रदेशों में यात्रा कराते हुए तथा ध्यान की गहराइयों में ले जाते हुए योगनिष्ठ गुरुदेवश्री ने अपनी अनुभवसंपन्न वाणी में कहा : ''**जीव अंतर्मुख होने की कला नहीं जानता इसीलिए मान-अपमान, सुख-दुःख, सफलता-विफलता के थपेड़े खाता रहता है। यदि वह भीतर आने की कला जानकर अन्तर्मुख होना सीख ले तो उसके सारे दुःख मिट जाएँ। जीव चाहे एक जनम में आए, चाहे दस जनम में आए, चाहे दस हजार जनम में आए, उसे आत्मा में आना ही**

पड़ेगा। जैसे सभी नदियों की अंतिम गति समुद्र है, वैसे ही सभी जीवों की अंतिम गति आत्मा-परमात्मा है।''

मन को अद्भुत शक्तियों का खजाना बताते हुए पूज्यश्री ने उसे एकाग्र एवं बुद्धि को विकसित करने के अनेक यौगिक प्रयोग कराये। कुण्डलिनी योग के अनुभवनिष्ठ सत्पुरुष पूज्यपाद बापू द्वारा आत्मप्रसाद की झलक पाकर प्रेमाभक्ति से भावविभोर साधकवृंद एक स्वर में गाने लगे :

दया करो हे दयालु गुरुवर !

जो तुम हो दाता तो हम हैं भिखारी...

यह कड़ी आते ही पूज्यश्री सहसा बीच में ही कह उठे :

न तुम हो भिखारी, न हम हैं दाता।

जो है हमारा वही है तुम्हारा...

गुरुदेवश्री की आत्मीयतापूर्ण प्रेम की झाँकी कई बार देखने में आई।

राष्ट्र की नींव विद्यार्थियों को शारीरिक, बौद्धिक व आत्मिक विकास की अनेक कुंजियाँ योगनिष्ठ पूज्यपाद बापू द्वारा बताई गईं। वक्तृत्व-स्पर्धा व लिखित परीक्षा का आयोजन कर विजेताओं को पुरस्कृत किया गया। शुभ संस्कारों का सिंचन करते हुए बच्चों के लाडले पूज्य बापू ने कहा : **''जिनका सदाचार शिथिल नहीं होता, जो अपने व्यवहार से माता-पिता व गुरुजनों को कष्ट नहीं पहुँचाते, प्रसन्न चित्त से धर्म का आचरण करते हैं उनके कुल की विशेष कीर्ति होती है। प्रत्येक विद्यार्थी को अपने कुल व राष्ट्र की कीर्ति बढ़ानेवाला होना चाहिए।''**

अन्त में, १६ मई को विदाई की बेला आ पहुँची। इस समय शायद ही ऐसा कोई नेत्र था जो भीगा और बरसा न हो, शायद ही कोई दिल था जो प्रेमाभक्ति से भीगा न हो। देश के कोने-कोने से आए हुए भक्तों ने भाव से परिप्लावित होकर अश्रुपूर्ण नेत्रों से विदाई ली।

दिनांक : २४ से २६ एवं २७ से ३० मई '९९ के दौरान इसी पुण्यतोया गंगा के तट पर दो शिविर एवं आखिर में पूर्णिमा दर्शनोत्सव सम्पन्न हुआ। गंगा का तट... हरिद्वार-सी तीर्थस्थली... पू. बापू जैसे सत्पुरुष का सान्निध्य... मानो त्रिवेणी-संगम हो उठा ! देश-विदेश से आए हुए असंख्य पिपासुओं ने पूज्यश्री की अमृतवर्षी योगवाणी का लाभ लेकर कृतकृत्यता का अनुभव किया। अंत में, आमरस के भण्डारे के साथ इस जीवनोद्धारक पावन शिविर की पूर्णाहुति हुई।

आगामी पूर्णिमा विषयक पू. बापू का संकेत

''पूर्णिमादर्शन-व्रतधारी इस पूर्णिमा पर नजदीक के संत श्री आसारामजी आश्रम में जाकर अथवा अपने ही घर पर रहकर तीन घण्टे जप एवं एक घण्टा अपने श्वासोच्छ्वास को निहारते हुए जप-ध्यान करके पूरा दिन मौन रहकर पूर्णिमा का व्रत पूर्ण करें। यह मुझे अधिक प्रिय लगेगा।'' **– पूज्य बापू**

नोट : आगामी पूर्णिमा के दिन पूज्य बापू अमदावाद आश्रम में रहें ऐसी संभावना है।

अन्य सत्संग-कार्यक्रम

दिनांक	शहर	कार्यक्रम	समय	स्थान	संपर्क फोन
३ से ६ जून '९९	मुलुंड-मुंबई में	सत्संग समारोह श्री सुरेशानंदजी द्वारा	सुबह ८-३० से १०-३० शाम ६ से ८	छत्रपति शंभाजी राजे मैदान, अरुणोदय नगर, जिमखाना के पास, नवघर रोड, मुलुंड (पूर्व).	५६७५५०७, ५६१०४१६, ५६४१६४३, ३७१९८०९, ५९११४५०.

⁂ पंचेड़-रतलाम आश्रम में ⁂

घर एवं समाज में तेजस्वी जीवन जीने का सामर्थ्य विकसित करने के लिए

पूजनीया माताजी श्री श्री माँ लक्ष्मीदेवी के पावन सान्निध्य एवं प्रेरक मार्गदर्शन में

तथा पू. भारतीदेवी एवं रेखा बहन के संचालन में

विद्यार्थी बहनों के लिए विद्यार्थिनी तेजस्वी तालीम शिविर : ३ से १३ जून '९९

स्थान : संत श्री आसारामजी आश्रम, पंचेड़ (नामली), जि. रतलाम (म. प्र.). फोन : (०७४१२) ८१२६३

(नोट : यह शिविर केवल विद्यार्थी बहनों के लिए ही है।)

अपने पैसों से पुष्पों की माला लाकर हृदयपूर्वक संतों का सत्कार करनेवाले श्री कुशाभाऊ ठाकरे बी.जे.पी. के अध्यक्ष तो हैं, पर संत और भगवान के लाडले भी।
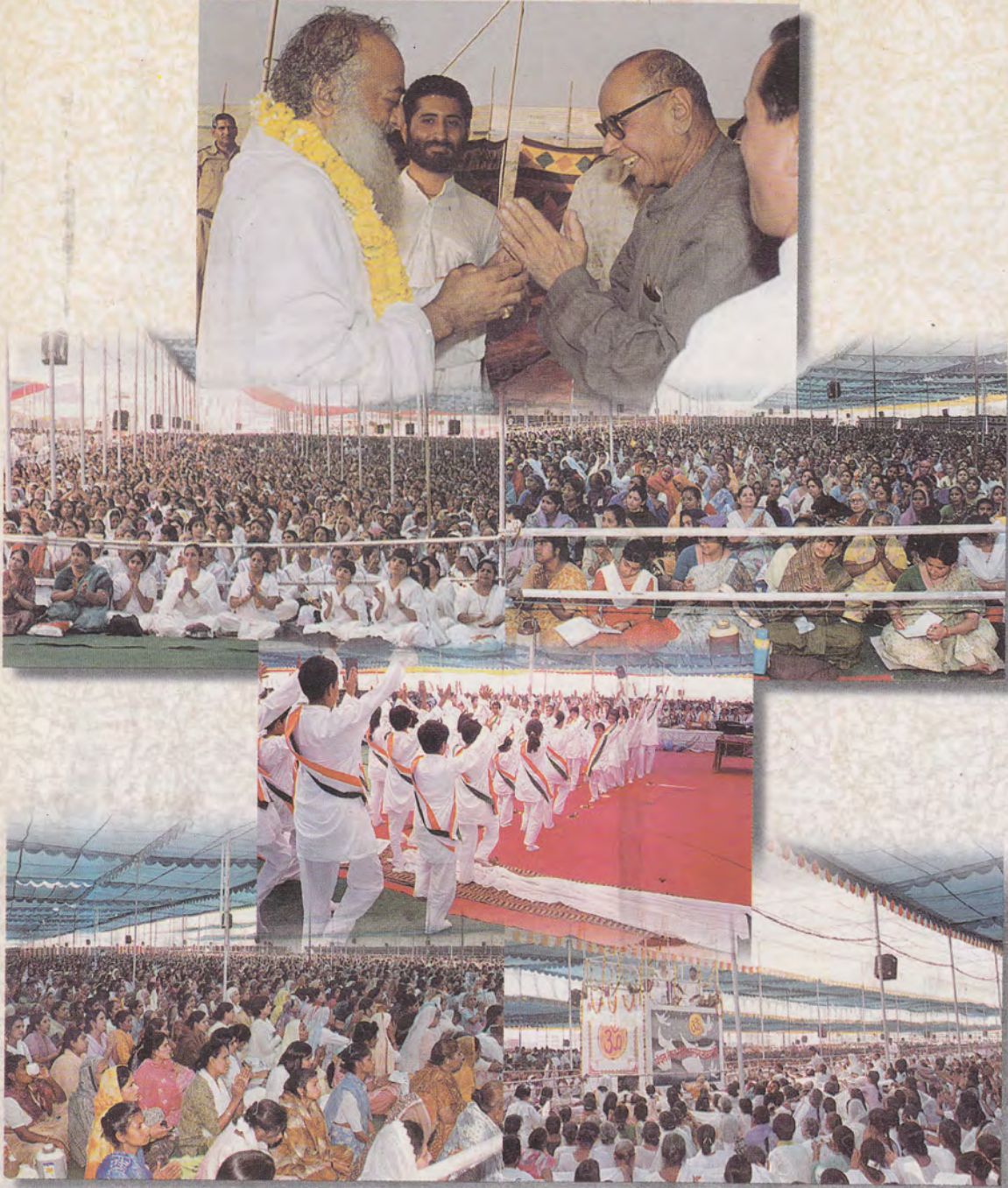
दिल्ली यमुनापार के इस महाकुंभ में ऐसा उत्सव व आनंदोल्लास ! इसी सत्संग समारोह में पूज्यश्री ने इलेक्ट्रिक ट्रॉली में बैठकर हजारों पूनम व्रतधारियों एवं श्रद्धालूओं को निकट से दर्शन दिये।

(१) आत्मा-परमात्मा को छूकर आनेवाली पूज्यश्री की अमृतवाणी को कोई हृदय में, तो कोई हृदय और कापियों में संजोये-सँभाले जा रहे हैं। धनभागी हैं ऐसे श्रोता !

(२) दिल्ली में स्कूलों के नन्हें-मुन्ने स्वागत-गीत गाकर पूज्यश्री का सत्कार किये जा रहे हैं।

REGISTRED WITH R.N.I. UNDER NO. 48873/91 LICENSED TO POST W/O PRE-PAYMENT : AHMEDABD PSO LICENCE NO. 207 Regd. No. GAMC/1132. BOMBAY, BYCULLA PSO LICENCE NO. 03 Regd. No. MH/MNV-02.